ॐ
माँ
क्रीं
विपरीतप्रत्यङ्गिरास्तोत्रसमन्वितम्
प्रत्यङ्गिरास्तोत्रम्
हिन्दीटीकासहितम्
सम्पादक :
आचार्य पण्डित शिवदत्तमिश्र शास्त्री
शिव संस्कृत संस्थान, वाराणसी

संस्कृतसेवाधर्मग्रन्थमाला–१५

विपरीतप्रत्यङ्गिरास्तोत्रसमन्वितम्

प्रत्यङ्गिरास्तोत्रम्

(हिन्दीटीकासहितम्)

अनुवादक तथा सम्पादक :
स्व. आचार्य पण्डित शिवदत्तमिश्र शास्त्री
व्याकरणाचार्य–साहित्यवारिधि–तन्त्ररत्नाकर

शिव संस्कृत संस्थान, वाराणसी

प्रकाशक :
शिव संस्कृत संस्थान
(प्राचीन भारतीय साहित्य एवं संस्कृति के प्रकाशक तथा वितरक)
कमलानगर (रमरेपुर), पाण्डेयपुर, वाराणसी

अन्य प्राप्ति स्थान :
विश्वभारती संस्कृत संस्थान
(सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय पूर्वी गेट के सामने)
जगतगंज, वाराणसी

सम्पर्कसूत्र : ९४५०५४०१३५

संशोधित परिवर्धित संस्करण २०१० ई.

मूल्य : २५.०० (पच्चीस रुपये)

अक्षर संयोजन :
राज ग्राफिक्स, नाटी इमली, वाराणसी
मोबाइल : ९९३५६८५४२८

दो शब्द

प्रस्तुत प्रत्यङ्गिरा स्तोत्र का पाठ एवं मन्त्र-जपादि का अनुष्ठान शत्रुओं द्वारा किये गये अभिचारों (यन्त्र-मन्त्र आदि कृत्यों) को नष्ट करने में सर्वथा उपयोगी एवं महत्त्वपूर्ण है। प्रायः बहुत से विद्वान् इस स्तोत्र का प्रतिदिन पाठ अपने और यजमान के लिए भी करके लाभान्वित होते हैं। इससे यह स्तोत्र बहुचर्चित तथा अनुभूत है।

इसमें प्रत्यङ्गिरा पूजन यन्त्र, जो अब तक अप्राप्त था और साथ में विपरीत-प्रत्यङ्गिरा स्तोत्र भी दे देने से यह संस्करण अत्यधिक उपयोगी सिद्ध हुआ है।

प्रस्तुत अभिनव संस्करण हिन्दी टीका सहित सर्वथा विशुद्ध निकालने के लिए हमारे चिरकालिक हार्दिक इच्छा का ही सुफल परिणाम है कि यह पुस्तक आपके हाथों में प्रस्तुत है।

आशा है, प्रस्तुत पुस्तक का यह अभिनव संस्करण सर्व-साधारण पाठकों के लिए भी विशेष उपयोगी एवं लाभप्रद सिद्ध होगा।

मकरसंक्रान्ति
१४ जनवरी, १९९६

—ओमप्रकाश मिश्र शास्त्री

प्रभावशाली
तान्त्रिक प्रत्यङ्गिरा यन्त्र
॥ श्री प्रत्यङ्गिरायन्त्रम् ॥
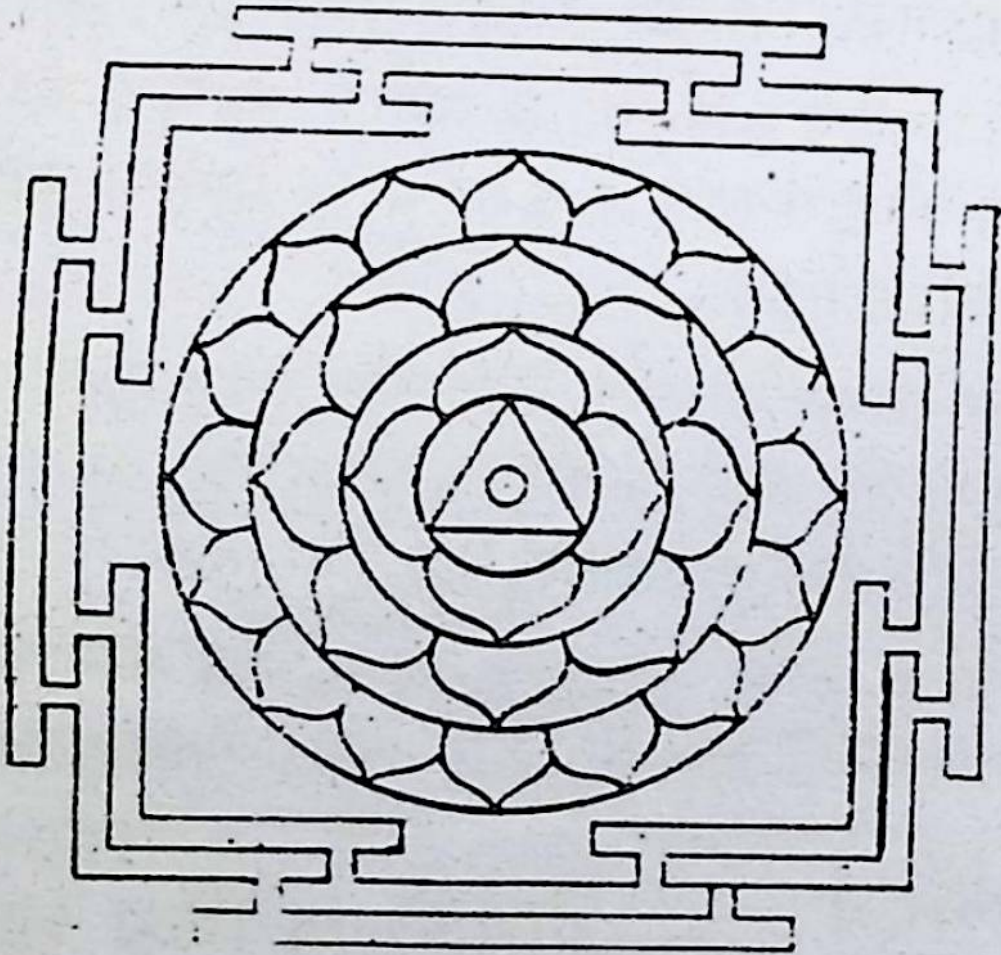
श्रीगणेशाय नमः

श्रीप्रत्यङ्गिरास्तोत्रम्

हिन्दीटीकासहितम्

विनियोगः— **ॐ अस्य श्रीप्रत्यङ्गिरास्तोत्रमन्त्रस्य वामदेव ऋषिः, अनुष्टुप्छन्दः, प्रत्यङ्गिरा देवता, ह्रीं बीजम्, हूं शक्तिः, क्लीं कीलकम्, ममाऽभीष्ट-सिद्ध्यर्थे जपे (पाठे च) विनियोगः ।**

प्रणम्य भारतीं भक्त्या विष्णुं भानुं गणेश्वरम् ।
साम्बं सदाशिवं चैव मातरं पितरं तथा ।।
सन्तशरणस्य पुत्रः 'शिवदत्ता'भिधानकः ।
प्रत्यङ्गिराऽऽख्यतन्त्रस्य भाषाटीकां तनोम्यहम् ।।

विनियोग–दाहिने हाथ में जल लेकर, '**ॐ अस्य श्रीप्रत्यङ्गिरास्तोत्रमन्त्रस्य॰**' से '**ममाऽभीष्टसिद्ध्यर्थे जपे (पाठे च) विनियोगः**' तक पढ़कर जलको किसी पात्र में छोड़ दें।

करन्यासः— **ॐ ऐं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः । ॐ ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः । ॐ श्रीं मध्यमाभ्यां नमः । ॐ प्रत्यङ्गिरे अनामिकाभ्यां नमः । ॐ मम रक्ष-रक्ष कनिष्ठिकाभ्यां नमः । ॐ मम शत्रूणां भक्ष-भक्ष करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः ।**

करन्यास– '**ॐ ऐं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः**' से दोनों अँगूठे का स्पर्श करे। '**ॐ ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः**' से दोनों अँगूठे की बगलवाली अँगुली को छुए। '**ॐ श्रीं मध्यमाभ्यां नमः**' पढ़कर बीच की अँगुली का स्पर्श करें। '**ॐ प्रत्यङ्गिरे अनामिकाभ्यां नमः**' कहकर बीच की अँगुली के बगलवाली अँगुली का स्पर्श करें। '**ॐ मम रक्ष-रक्ष कनिष्ठिकाभ्यां नमः**' से कानी अँगुली का स्पर्श करें। '**ॐ मम शत्रूणां भक्ष-भक्ष करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः**' पढ़कर दोनों हाथों की हथेलियों एवं उनके पृष्ठ भागों का स्पर्श करना चाहिए।

हृदयादिन्यासः— **ॐ ऐं हृदयाय नमः । ॐ ह्रीं शिरसे स्वाहा । ॐ श्रीं शिखायै वषट् । ॐ प्रत्यङ्गिरे कवचाय हुम् । ॐ मम रक्ष-रक्ष नेत्रत्रयाय वौषट् । ॐ मम शत्रूणां भक्ष-भक्ष अस्त्राय फट् ।**

दिग्बन्धनम्— **ॐ ॐ भूर्भुवः स्वः, इति ।**

हृदयादिन्यास– 'ॐ ऐं हृदयाय नमः' से हृदय का स्पर्श करें। **'ॐ ह्रीं शिरसे स्वाहा'** से सिर को छुए। **'ॐ श्रीं शिखायै वषट्'** से शिखा का स्पर्श करें। **'ॐ प्रत्यङ्गिरे कवचाय हुम्'** से दोनों हाथों की भुजाओं का स्पर्श करें। **'ॐ मम रक्ष-रक्ष नेत्रत्रयाय वौषट'** पढ़कर दोनों नेत्रों का स्पर्श करें। **'ॐ मम शत्रूणां भक्ष-भक्ष अस्त्राय फट्'** से दाहिने हाथ की तर्जनी एवं मध्यमा अँगुली से बाँयें हाथ से ताली बजाना चाहिए।

दिग्बन्धन– 'ॐ भूर्भुवः स्वः' मन्त्र पढ़कर सभी दिशाओं में चुटकी बजा दें।

प्रत्यङ्गिरा-मन्त्रः— **ॐ ऐं ह्रीं श्रीं प्रत्यङ्गिरे मम रक्ष-रक्ष मम शत्रूणां भक्ष-भक्ष स्वाहा।**

प्रत्यङ्गिरा-ध्यानम्

टङ्कं कपालं डमरुं त्रिशूलं
सम्बिभ्रतीं चन्द्रकलावतंसा।
पिङ्गोर्ध्वकेशा-ऽसित-भीमदंष्ट्रा
भूयाद् विभूत्यै मम भद्रकाली॥

मन्त्र– 'ॐ ऐं ह्रीं श्रीं प्रत्यङ्गिरे मम रक्ष-रक्ष मम शत्रूणां भक्ष-भक्ष स्वाहा।' यह भगवती प्रत्यङ्गिरा देवी के जप का मन्त्र है।

ध्यान– अपने हाथों में तलवार, नृकपाल (नरमुण्ड), डमरू और त्रिशूल तथा मस्तक पर चन्द्रकला धारण करने वाली, जिस भद्रकाली के पीले-पीले तथा ऊपर की ओर

मन्दरस्थं सुखासीनं भगवन्तं महेश्वरम् ।
समुपागम्य चरणैः पार्वती परिपृच्छति ।।१।।

देव्युवाच

धारणीया महाविद्या प्रत्यङ्गिरा शुभोदया ।
नर-नारी-हितार्थाय बालानां रक्षणाय च ।।२।।

उठे हुए केश एवं काले-काले तथा भायनक दाँत हैं, वह भद्रकाली हमारी रक्षा करें।

मन्दराचल पर सुखपूर्वक बैठे हुए भगवान् महेश्वर के सन्निकट भगवती पार्वती ने पैदल जाकर उनसे प्रश्न किया ।।१।।

देवी ने कहा— हे महेश्वर! समस्त स्त्री-पुरुषों के हित के लिए तथा बालकों की रक्षा के लिए शुभ फल देने वाली महाविद्या प्रत्यङ्गिरा ही सबको धारण करना चाहिए। हे महेश्वर! यह प्रत्यङ्गिरा महाविद्या माण्डलिक

राज्ञां माण्डलिकानां च दीनानां च महेश्वर ! ।
विदुषां च द्विजातीनां विशेषेणाऽर्थसाधिनी ।।३।।
महाभयेषु घोरेषु विद्युदग्निभयेषु च ।
व्याघ्र-दंष्ट्रा-कराघाते नदी-नद-समुद्रगे ।।४।।
श्मशाने दुर्गमे घोरे सङ्ग्रामे शत्रुसङ्कटे ।
अभिचारेषु सर्वेषु रणे राजकुलेषु च ।।५।।

(सम्राट्) राजाओं, दीनजनों तथा विद्वानों का एवं द्विजातिमात्र का विशेष रूप से मनोरथ सिद्ध करती हैं ।।२-३।।

भयङ्कर-से-भयङ्कर महाभय उपस्थित होने पर, बिजली एवं अग्नि के द्वारा भय उपस्थित होने पर, व्याघ्र के द्वारा आक्रमण की स्थिति में, नदी, नद, समुद्र, श्मशान, दुर्गम स्थान एवं शत्रु द्वारा घोर संग्राम के सङ्कट की स्थिति में मारणादि अभिचार में, सभी प्रकार के संग्राम

धारिता पाठिता देवि! समीहित-फलप्रदा।
पाठितासाधकेन्द्रेण कारयेत् स्वान् मनोरथान्।।६।।
सौभाग्यजननीं नित्यं नृणां वश्यकरीं तथा।
तां सुविद्यां सुरश्रेष्ठ! कथयस्व मयि प्रभो!।।७।।

भैरव उवाच

साधु साधु महाभागे! जन्तूनां हितकारिणि!।
त्वद्वाक्येन सुरारिघ्ने! कथयामि न संशयः।।८।।

एवं राजकुलों द्वारा आपत्ति की स्थिति उत्पन्न होने पर इस विद्या के धारण तथा पाठ करने से साधक के सभी मनोरथ पूर्ण हो जाते हैं। हे प्रभो! हे महेश्वर! समस्त सौभाग्य प्रदान करने वाली, सभी लोगों को वश में करने वाली उस महाविद्या को मुझे बताइए ? ।।४-७।।

भैरव बोले– हे समस्त जगत् का हित करने वाली, हे महाभागे पार्वति! तुम्हें शतशः साधुवाद हैं, जो इस प्रकार

देवी प्रत्यङ्गिरा विद्या सर्वग्रहनिवारिणी ।
मर्दिनी सर्वदुष्टानां सर्वपापप्रणाशिनी ।।९।।
सौभाग्यजननी देवी बलपुष्टिकरी तथा ।
चतुष्पथेषु घोरेषु वनेषु पवनेषु च ।।१०।।
राजद्वारेषु दुर्भिक्षे महाभय उपस्थिते ।
पठिता पाठिता विद्या सर्वसिद्धिकरी स्मृता ।।११।।

का प्रश्न किया है। हे दैत्यनिषूदिनि ! तुम्हारे प्रश्न करने पर मैं उस महाविद्या के विषय में कहता हूँ ।।८।।

यह महाविद्या प्रत्यङ्गिरा देवी सभी ग्रह-बाधाओं को दूर करने वाली हैं, समस्त दुष्टों का मर्दन करने वाली तथा सारे पापों को विनष्ट करने वाली हैं ।।९।।

मनुष्यों को समस्त सौभाग्य प्रदान करती और पुष्टि देती हैं। चतुष्पथ में, घोर अरण्य में, महाभयानक तूफान में, राज़द्वार एवं दुर्भिक्ष आदि महाभय के उपस्थित होने पर इस महाविद्या के स्वयं पाठ करने तथा अन्यों से पाठ कराने से सारी सिद्धियों का लाभ होता है ।।१०-११।।

लिखित्वा च करे कण्ठे बाहौ शिरसि धारयेत् ।
मुच्यते सर्वपापेभ्यो मृत्युं नास्ति कदाचन ।।१२।।

धारयेद्योगयुक्तो यस्तस्य रक्षा भवेद् ध्रुवम् ।
धारिता वाऽर्चिता विद्या प्रत्यङ्गिरा शुभोदिता ।।१३।।

गृहे चैवाऽष्टसिद्धिश्च देव-राक्षस-पन्नगाः ।
त तस्य पीडां कुर्वन्ति ये चाऽन्ये पीडकग्रहाः ।।१४।।

इस विद्या के मन्त्र एवं यन्त्र को लिखकर बाहु, हाथ, कण्ठ तथा शिर पर धारण करने वाला मनुष्य सभी पापों से मुक्त हो जाता है और कभी भी उसकी अकाल मृत्यु नहीं होती। योग करने वाला व्यक्ति यदि इस महाविद्या के यन्त्र तथा मन्त्र को धारण करे तो निश्चय ही उसके योग में विघ्न नहीं होते और उसकी रक्षा होती है। यह महाविद्या प्रत्यङ्गिरा धारण करने तथा अर्चन-पूजन करने से शुभ फल देने वाली कही गई हैं ।।१२-१३।।

विद्यानामुत्तमा विद्या पठिता वाऽर्चिता सदा ।
यस्याऽङ्गस्था महाविद्या प्रत्यङ्गिरा सुभाषिता ।।१५।।
सिद्धा सुसिद्धिदा नित्या विद्येयं परमा स्मृता ।
श्रीमता घोररूपेण भाषिता घोररूपिणी ।।१६।।

उस साधक के घर में आठों सिद्धियाँ स्वयं आ जाती हैं एवं देवता, राक्षस और सर्पादि दुष्ट जन्तु तथा अन्य प्रकार के पीड़ा कारक ग्रह उसको पीड़ित नहीं करते ।।१४।।

यह प्रत्यङ्गिरा महाविद्या सभी महाविद्याओं में श्रेष्ठ हैं। इन्हें प्रत्यङ्गिरा इसलिए कहते हैं कि, पाठ करने तथा अर्चन-पूजन करने से यह साधक के प्रत्येक अङ्ग में स्थित हो जाती हैं ।।१५।।

यह स्वयं सिद्ध हैं, साधक को सिद्धि देती हैं, नित्य तथा सर्वश्रेष्ठ महाविद्या हैं ऐसा कहा गया है। घोर रूप धारण कर मैंने ही इनका व्याख्यान किया है, इसलिए यह भी सर्वथा निष्पाप एवं पवित्र हैं। यह शत्रुओं को विनष्ट

प्रत्यङ्गिरा मया प्रोक्ता रिपून् हन्यान्न संशयः ।
हरिचन्दनमिश्रेण गोरोचन-कुङ्कुमेन च ।।१७।।
लिखित्वा भूर्जपत्रेषु धारणीया सदा नृभिः ।
पुष्प-धूपै-र्विचित्रैश्च बल्युपहारपूजनैः ।।१८।।
पूजयित्वा यथान्यायं शान्तकुम्भेन वेष्टयेत् ।
धारयेद्य इमां विद्यां निश्चितां रिपुनाशिनीम् ।।१९।।
विलयं यान्ति रिपवः प्रत्यङ्गिरा-विधानतः ।
यद्यत् स्पृशति हस्तेन यद्यत् खादति जिह्वया ।।२०।।

कर देती हैं, इसमें संशय नहीं। गोरोचन, कुङ्कुम (केशर) और हरिचन्दनको एक में मिलाकर भोजपत्र पर लिखकर इस प्रत्यङ्गिरा यन्त्र को मनुष्यों को धारण करना चाहिये। पुष्प, धूप तथा अनेक प्रकार के बलि-उपहारों से पूजन तथा विधिपूर्वक सुवर्ण के सदृश पीले वस्त्र से वेष्टित कर धारण करने से यह महा-विद्या निश्चय ही साधक के शत्रुओं को विनष्ट कर देती हैं ॥१६-१९॥

अमृतं तद्भवेत् सर्वं मृत्युर्नास्ति कदाचन।
कर्मणा यो जपेद्यस्तु कृत्रिमं दारुणं सदा।।२१।।
भक्षितं तृप्तिमत्याशु नरस्य तस्य सुव्रते!।
तथाऽस्यां पाठ्यमानायां जीर्यते नाऽत्र संशयः।।२२।।
नृणां रक्षाकरी देवी सर्वसिद्धिकरी स्मृता।
सर्वमन्त्रविनाशी च गोलकस्थान्तरः परा।।२३।।

विधान पूर्बक प्रत्यङ्गिरा के अनुष्ठान करने से साधक के सारे शत्रु विनष्ट हो जाते हैं। ऐसा साधक जिस-किसी भी खाद्य वस्तु का स्पर्श करता है अथवा जो कुछ भी खाता है वह सब अमृत हो ज़ाता है। जो विधिपूर्वक प्रत्यङ्गिरा मन्त्र का जप करता है उसकी कृत्रिम एवं दारुण मृत्यु कदापि नहीं होती ॥२०-२१॥

हे सुव्रते! प्रत्यङ्गिरा मन्त्र का पाठ करते हुए खाये गये सभी पदार्थ शीघ्रता से पच जाते हैं। इस स्तोत्र का पाठ पूर्वक भोजन करने से सारे अन्न अपने-आप जीर्ण हो जाते हैं, इसमे संशय नहीं ॥२२॥

सर्वव्याधिहरी विद्या सिद्धिदात्री महेश्वरी ।
प्राप्नोति वसुधां सर्वां रिपुहस्तगतां श्रियम् ।।२४।।
वशास्तस्यैव तिष्ठन्ति शत्रवः प्राणहारकाः ।
अभ्यस्यतां याति विद्यां सिद्धिविद्या-प्रसादतः ।।२५।।

गोलोक में निवास करने के कारण यह विद्या परा कहीं जाती है। यह साधक मनुष्यों की रक्षा करती है, सारी सिद्धियाँ प्रदान करती है। इसके प्रभाव से अन्य सारे मन्त्रों का प्रभाव विनष्ट हो जाता है। यह महेश्वरी है, जो समस्त व्याधियों का विनाश एवं समस्त सिद्धियाँ प्रदान कती हैं। इसका साधक शत्रु के वश में रहने वाली लक्ष्मी तथा समस्त वसुधा को भी प्राप्त कर सकता है। प्राणा-पहारक शत्रु भी उस साधक के वशीभूत हो जाते हैं। इस विद्या का अभ्यास (अनुष्ठान) करने वाला पुरुष इस विद्या की सिद्धि के प्रभाव से समस्त विद्या प्राप्त कर लेता है ।।२३-२५।।

अबला च वशात्तस्य सुन्दर्यः प्रियदर्शनाः ।
चराऽचरमिदं सर्वं स-शैल-वन-काननम् ।।२६।।
नर-नारी-समाकीर्णं साधकस्य च सुव्रते ! ।
सर्वत्र वशतां यान्ति यजमानस्य नित्यशः ।।२७।।
गोलकस्य प्रभावेण प्रत्यङ्गिराप्रभावतः ।
त्रिपुरश्च मया दग्ध इमां विद्यां च बिभ्रता ।।२८।।
निर्जितास्त्राऽसुराः सर्वे देवैर्विद्याभिमानिभिः ।
गोलकं च प्रवक्ष्यामि भैषज्यं ते च सुव्रते ! ।।२९।।

अनेक सुन्दर-से-सुन्दर स्त्रियाँ उस साधक के वश में हो जाती हैं। हे सुव्रते ! यह शैल-वन समेत सारा चराचर जगत् जो नर और नारियों से व्याप्त हैं। वे सभी इस मन्त्र के अनुष्ठान करने वाले के वश में हो जाते हैं। गोलक के प्रभाव एवं इस प्रत्यङ्गिरा के प्रभाव तथा इस महाविद्या के धारण करने से मैंने त्रिपुर का विनाश किया ।।२६-२८।।

जिस महाविद्या का अनुष्ठान कर देवताओं ने असुरों

पञ्चवर्णैः पञ्चदलैः द्वारर्धे द्वारशोभितम् ।
द्वात्रिंशत्पत्रमध्ये तु लिखेन्मन्त्रस्य दैवतम् ।।३०।।
कूटस्थं कुरुते दिक्षु विदिक्षु बीजपञ्चकम् ।
फट्कारेण च संयुक्तं रक्षेच्च साधकोत्तमः ।।३१।।
विष्णुक्रान्तां मदनकं कुङ्कुमं रोचनं तथा ।
आरुष्करं विपारिष्टं सिद्धार्थं मालतीं तथा ।
एतद् द्रव्यगणं भद्रे ! गोलमध्ये निधापयेत् ।।३२।।

पर विजय प्राप्त किया। हे सुव्रते ! अब मैं उस भैषज्य भूत गोलक का निरूपण तुमसे करता हूँ ।।२९।।

द्वार के अर्ध भाग को पाँच वर्णों वाले पाँच पत्तों से द्वार को सुशोभित करे, पुनः बत्तिस पत्रों में मन्त्र के देवता को लिखे। चारों दिशाओं में मन्त्र के कूटाक्षर लिखे फिर चारों कोनों में बीजपञ्चक लिखे। इस प्रकार हुँ फट् के सहित लिखकर उत्तम साधक अपनी रक्षा करें। विष्णुकान्ता, दमनक, कुङ्कुम, गोरोचन, अरुष, विषा-रिष्ट, सिद्धार्थ तथा मालती इन द्रव्यों को गोलक के मध्य में स्थापित करें ।।३०-३२।।

सम्भृतं धारयेन्मन्त्री साधको मन्त्रवित् सदा ।
अधुना सम्प्रवक्ष्यामि प्रत्यङ्गिरां सुभाषिताम् ।।३३।।
दिव्यैर्मन्त्र पदैश्चित्तैः सुखोपायैः सुखप्रदैः ।
पठेदक्षामिधानेन मन्त्रराजः प्रकीर्तितः ।।३४।।

●

अथातो मन्त्रपदानि भवन्ति । तानि मत्राण्युच्यन्ते–

मन्त्रवेत्ता साधक को इन द्रव्यों से संयुक्त गोलक यन्त्र धारण करना चाहिए। हे देवि ! अब मैं प्रामाणिक पुरुषों द्वारा सुभाषित प्रत्यङ्गिरा मन्त्र को तुम से कहता हूँ। इस मन्त्र के पदों को सुखपूर्वक स्वस्थ चित्त से उच्चारण करना चाहिए। इसे मन्त्रराज भी कहा जाता है। यह रक्षात्मक है एवं शत्रुविनाशक तो है ही ॥३३-३४॥

अब प्रत्यङ्गिरा मन्त्र में जितने भी पद हैं, उनको तुमसे कहता हूँ। **'ॐ नमः शिवाय सहस्र सूर्येक्षणाय'** से लेकर

ॐ नमः शिवाय सहस्रसूर्येक्षणाय ॐ अनादिरूपाय अनादिपुरुषाय पुरुहूताय महामयाय महाव्यापिने महेश्वराय ॐ जगत्साक्षिणे सन्ताप-भूतव्यापिने महाघोराऽतिघोराय ॐ ॐ महा-प्रभावं दर्शय दर्शय ॐ ॐ हिलि-हिलि ॐ हन-हन ॐ गिलि-गिलि ॐ मिलि-मिलि ॐ ॐ भूरि-भूरि विद्युजिह्वे ज्वल-ज्वल प्रज्वल-प्रज्वल धम-धम बन्ध-बन्ध मथ-मथ प्रमथ-प्रमथ विध्वंसय-विध्वंसय सर्वान् दुष्टान् ग्रस-ग्रस पिब-पिब नाशय-नाशय त्रासय-त्रासय भ्रामय-भ्रामय दारय-दारय द्रावय-द्रावय दर-दर विदुर-विदुर विदारय-विदारय रं रं रं रं रं रक्षरक्ष त्वं मां साधकं मां पाठकं च रक्षरक्ष हुं फट् स्वाहा ।

ऐं ऐं हुं हुं रक्ष रक्ष सर्वभूतभयोपद्रवेभ्यो महा-

मेघौघ-सर्वतोऽग्नि-विद्युदर्क-संवर्त-कपर्दिनि ! दिव्यकणिकाम्भोरुह-विकच-पद्ममालाधारिणि ! शितिकण्ठाभखट्वां कपालधृक् व्याघ्राजिनधृक् परमेश्वरप्रिये ! मम शत्रून् छिन्धिछिन्धि भिन्धि भिन्धि विद्रावय-विद्रावय देवता-पितृ-पिशाचोर-गनागा-ऽसुर - गरुड-गन्धर्व-किन्नर-विद्याधर-यक्ष-राक्षसान् ग्रहाँश्च स्तम्भय-स्तम्भय ये च धारकस्य पाठकस्य वा स-परिवारस्य शत्रवस्तान् सर्वान् निकृन्तय निकृन्तय ये च सर्वे मम अविद्यां कर्म कुर्वन्ति कारयन्ति वा तेषाम् अविद्यां स्तम्भय स्तम्भय तेषां देशं कीलय-कीलय तेषां बुद्धिर्घातय घातय ग्रामं घातय-घातय रोमं कीलय-कीलय शत्रु स्वाहा ।

ॐ ॐ विश्वमूर्ते महातेजसे ॐ जः ॐ जः ॐ

ठः ठः मम शत्रूणां विद्यां स्तम्भय-स्तम्भय ॐ जः ॐ जः ॐ ठः ठः मम शत्रूणां शिरमुखे स्तम्भय स्तम्भय ॐ जः ॐ जः ॐ ठः ठः मम शत्रूणां नेत्रे स्तम्भय-स्तम्भय ॐ जः ॐ जः ॐ ठः ठः मम शत्रूणां हस्तौ स्तम्भयस्तम्भय ॐ जः ॐ जः ॐ ठः ठः मम शत्रूणां दन्तान् स्तम्भय-स्तम्भय ॐ जः ॐ जः ॐ ठः ठः मम शत्रूणां जिह्वां स्तम्भय स्तम्भय ॐ जः ॐ जः ॐ ठः ठः मम शत्रूणाम् उदरं स्तम्भय-स्तम्भय ॐ जः ॐ जः ॐ ठः ठः मम शत्रूणां नाभिं स्तम्भय-स्तम्भय ॐ जः ॐ जः ॐ ठः ठः मम शत्रूणां गुह्यं स्तम्भयस्तम्भय ॐ जः ॐ जः ॐ ठः ठः मम शत्रूणां पादौ स्तम्भय-स्तम्भय ॐ जः ॐ जः ॐ ठः ठः मम शत्रूणां सर्वेन्द्रियाणि स्तम्भय-स्तम्भय

ॐ जः ॐ जः ॐ ठः ठः मम शत्रूणां कुटुम्बानि स्तम्भय-स्तम्भय ॐ जः ॐ जः ॐ ठः ठः मम शत्रूणां स्थानं कीलय कीलय ॐ जः ॐ जः ॐ ठः ठः मम शत्रूणां देशं कीलय-कीलय ॐ जः ॐ जः ॐ ठः ठः मम शत्रूणां मण्डलं कीलय-कीलय ॐ जः ॐ जः ॐ ठः ठः मम शत्रूणां ग्रामं कीलय-कीलय ॐ जः ॐ जः ॐ ठः ठः मम शत्रूणां प्राणान् स्तम्भय-स्तम्भय ॐ सर्व-सिद्धिमहाभागे ! मम धारकस्य पाठकस्य वा स-परिवारस्य शान्तिं कुरु कुरु स्वाहा ।

ॐ ॐ हुँ हुँ फट् स्वाहा । ॐ हुँ हुँ हुँ हुँ हुँ फट् स्वाहा । ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ यं यं यं यं यं रं रं रं रं रं लं लं लं लं लं वं वं वं वं वं शं शं शं शं शं षं षं षं षं षं सं सं सं सं सं हं हं हं हं हं क्षं क्षं क्षं क्षं क्षं ह्रीं

ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं हुं हुं हुं हुं हुं फट् स्वाहा। ॐ जः ॐ जः ॐ ठः ठः हुँ हुँ फट् स्वाहा। ॐ जूं सः फट् स्वाहा। ॐ नमो भगवति प्रत्यङ्गिरे! मम धारकस्य पाठकस्य वा स-परिवारस्य सर्वतो रक्षां कुरु कुरु फट् स्वाहा।

ॐ जः ॐ जः ॐ ठः ठः ॐ हुँ हुँ हुँ हुँ हुँ ॐ हुँ हुँ फट् स्वाहा।

ॐ नमो भगवति! दुष्टचण्डालिनि! त्रिशूल-वज्रा-ऽङ्कुश-शक्तिधारिणि! रुधिर-मांसल-वसा-भक्षिणि! कपाल-खट्वाङ्गधारिणि! मम शत्रून् छेदय-छेदय दह-दह हन-हन पच-पच धम-धम मथ-मथ सर्वदुष्टान् ग्रस-ग्रस ॐ ॐ हुं हुं फट् स्वाहा। ॐ हुं हुं हुं हुं हुं स्वाहा।

ॐ ॐ ह्रीं दंष्ट्राकालिनि! मम कृते मन्त्र-

यन्त्र-तन्त्र - प्रयोगविषचूर्ण - शस्त्राद्य - विचार-सर्वोपद्रवादिकं येन कृतं कारितं कुरुते कारयन्ति करिष्यन्ति वा तान् सर्वान् हन-हन-हन प्रत्यङ्गिरे ! त्वं मां धारकस्य स-परिवारकं रक्ष रक्ष हुं हुं हुं हुं हुं फट् स्वाहा । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं स्फ्रें स्फ्रें हुँ हुँ फट् स्वाहा ।

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं मम शरीरे रक्ष-रक्ष फट् स्वाहा । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं माहेश्वरि ! मम नेत्रे रक्ष-रक्ष स्वाहा । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं स्फ्रें स्फ्रें हुं ब्रह्माणि ! मम शिरो रक्ष रक्ष स्वाहा । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं स्फ्रें स्फ्रें हुं कौमारि ! मम वक्त्रं रक्ष-रक्ष स्वाहा । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं स्फ्रें स्फ्रें हुं वैष्णवि ! मम कण्ठं रक्ष-रक्ष स्वाहा । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं स्फ्रें स्फ्रें हुं नारसिंहि ! मम बाहू रक्ष-रक्ष स्वाहा । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं स्फ्रें स्फ्रें हुँ

वाराहि ! मम हृदयं रक्ष-रक्ष स्वाहा । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं स्फ्रें स्फ्रें हुँ ऐन्द्रि ! मम नाभिं रक्ष-रक्ष स्वाहा । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं स्फ्रें स्फ्रें हुं चामुण्डे ! मम गुह्यं रक्ष-रक्ष स्वाहा । ॐ ऐं ह्रीं श्री स्फ्रें स्फ्रें हुं माहेश्वरि ! मम जङ्घे रक्ष रक्ष स्वाहा । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं स्फ्रें स्फ्रें हुं मोहिनि ! मम शत्रून् मोहयमोहय स्वाहा ।

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं स्फ्रें स्फ्रें हुं हुं प्रत्यङ्गिरे ! मम शरीरं रक्षरक्ष स्वाहा ।

कूटस्था कुरुते दिक्षु विदिक्षु बीजपञ्चकम् ।
फट्कारेण समोपेतं रक्ष त्वं साधकोत्तम ।।१।।

'ॐ ऐं ह्रीं श्रीं स्फ्रें स्फ्रें हुँ हुँ प्रत्यङ्गिरे मम शरीरं रक्ष-रक्ष स्वाहा' पर्यन्त प्रत्यङ्गिरा माला मन्त्र का पाठ और जप करना चाहिए।

चारों दिशाओं में कूट वर्णों को तथा चारों कोनों पर

स्तम्भिनी मोहिनी चैव क्षोभिणी द्राविणी तथा ।
जृम्भिणी भ्रामरी रौद्री तथा संहारिणीति च ।।२।।
शक्तयः शोषिणी चैव शत्रुपक्षनियोजितः ।
साधिताः साधकेन्द्रेण सर्वशत्रुविनाशिनी ।।३।।

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं स्फ्रें स्फ्रें हुं स्तम्भिनि ! मम शत्रून् स्तम्भय स्तम्भय स्वाहा । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं स्फ्रें स्फ्रें हुं मोहिनि ! मम शत्रून् मोहय मोहय स्वाहा । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं स्फ्रें स्फ्रें हुं भ्रामिणि ! मम शत्रुन् भ्रामय भ्रामय स्वाहा ।

बीजपञ्चक लिखना चाहिए। फिर 'रक्ष त्वं साधकोत्तम हुँ फट्' लिखना चाहिए ॥१॥

स्तम्भिनी, मोहिनी, क्षोभिणी, द्राविणी, जृम्भिणी, भ्रामरी, रौद्री, संहारिणी तथा शोषिणी ये प्रत्यङ्गिरा की शक्तियाँ कही गयी हैं, जिनका प्रयोग शत्रुपक्ष के लिए किया जाता है। जब साधक इन शक्तियों के सहित प्रत्यङ्गिरा को सिद्ध कर लेता है तो वह शत्रुपक्ष का विनाश कर देती है ॥२-३॥

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं स्फ्रें स्फ्रें हुं रौद्रि ! मम शत्रून् रौद्रय-रौद्रय स्वाहा । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं स्फ्रें स्फ्रें हुं संहारिणि ! मम शत्रुन् संहारय-संहारय स्वाहा । ॐ ऐं ह्री श्रीं स्फ्रें स्फ्रें हुँ शोषिणि ! मम शत्रून् शोषय-शोषय स्वाहा ।

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं स्फ्रें स्फ्रें हुं प्रत्यङ्गिरे ! विकटदंष्ट्रे ! ह्रीं ह्रीं कालिकेलि ! स्फ्रें स्फ्रें कारिणि मम शत्रून् छेदय छेदय स्वादय स्वादय सर्वान् दुष्टान् मारय मारय खड्गेन छिन्धि छिन्धि किलि किलि चिकि चिकि पिब पिब रुधिरं स्फ्रें स्फ्रें किरि-किरि कालि-कालि महाकालि महाकालि श्रीं ह्रीं ऐं हुं हुं फट् स्वाहा ।

य इमां धारयेद् विद्यां त्रिसन्ध्यं वाऽपि यः पठेत् ।
सोऽपि दुष्टान्तको भूत्वा हन्याच्छत्रून् न संशयः ।।४।।

जो इस विद्या को धारण करता है अथवा इसका तीनों काल पाठ करता है, वह दुष्टों का काल बन कर अपने शत्रुओं का विनाश कर देता है इसमें संशय नहीं।

सर्व हि रक्षयेद् विद्यां महाभय-विपत्तिषु।
महाभयेषु घोरेषु न भयं विद्यते क्वचित्।
सर्वान् कामानवाप्नोति मर्त्यो देवि ! न संशयः।
अष्टोत्तरशतं जपेत् साक्षात् सिद्धीश्वरो भवेत्॥५॥
ऋषिस्तु भैरवो नाम छन्दोऽनुष्टुप्-प्रकीर्त्तितम्।
देवता कौशिकी प्रोक्ता नाम प्रत्यङ्गिरैव सा॥६॥

महाभय अथवा महान् विपत्ति आने पर प्रत्यङ्गिरा के पाठ से अपने समस्त वस्तुओं की रक्षा करनी चाहिए। जिससे महाभय एवं घोर-से-घोर विपत्ति में कहीं भी भय उपस्थित न हो। भैरव कहते हैं कि, हे देवि ! प्रत्यङ्गिरा की उपासना करने वाला व्यक्ति अपनी सारी कामनाएँ पूर्ण कर लेता है, इसमें संशय नहीं। उपर्युक्त प्रत्यङ्गिरा माला मन्त्र का एक सौ आठ बार पाठ करने वाला व्यक्ति साक्षात् सभी सिद्धियों का ईश्वर हो जाता है॥४-५॥

इस माला मन्त्र के भैरव ऋषि हैं, अनुष्टुप् छन्द कहा

कूर्चबीजं षडङ्गानि कल्पयेत् साधकोत्तमः ।
सर्वाकृष्टोपचारैस्तु ध्यायेत् प्रत्यङ्गिरां शुभाम् ।।७।।

ध्यानम्

टङ्कं कपालं डमरुं त्रिशूलं
सम्बिभ्रतीं चन्द्रकलावतंसं ।
पिङ्गोर्ध्वकेशा-ऽसित-भीमदंष्ट्रा
भूयाद् विभूत्यै मम भद्रकाली ।।८।।

गया है। इसके देवता कौशिकी हैं। यही कौशिक प्रत्यङ्गिरा भी कही जाती हैं। इस मन्त्र का उत्तम साधक कूर्चबीज तथा षडङ्ग की कल्पना स्वयं कर लेवे। प्रत्यङ्गिरा भगवती को आकृष्ट करने वाले अनेक उत्तमोत्तम उपचारों से पूजन कर उनका ध्यान इस प्रकार करना चाहिए ।।६-७।।

ध्यान– अपने हाथों में तलवार, नृकपाल (नरमुण्ड), डमरू और त्रिशूल तथा मस्तक पर चन्द्रकला धारण करने वाली, जिस भद्रकाली के पीले-पीले तथा ऊपर की ओर

एवं ध्यात्वा जपेन्मन्त्रमेकविंशति-वासरान् ।
शत्रून् सन्नाशयेत्तं च प्रकारोऽयं सुनिश्चितम् ।।९।।
अथाऽष्टम्यामर्धरात्रौ शरत्काले महानिशि ।
आराधिता च सा काली तत्क्षणात् सिद्धिदा भवेत् ।।१०।।
सर्वोपचारसम्पन्नो रक्तवस्त्रफलादिभिः ।
पुष्पैश्च रक्तवर्णैश्च साधयेत् कालिकां पराम् ।।११।।

उठे हुए केश एवं काले-काले तथा भायनक दाँत हैं, वह भद्रकाली हमारी रक्षा करें ॥८॥

इस प्रकार ध्यान कर इक्कीस दिन पर्यन्त प्रत्यङ्गिरा का जप करना चाहिए। यह विधान निश्चय ही साधक के समस्त शत्रुवर्ग का नाश कर देता है। शरद् काल के नवरात्र में, जब अर्धरात्रि में अष्टमी की महानिशा हो, उस समय आराधना करने से यह भगवती अवश्य ही सिद्धि प्रदान करती हैं ॥९-१०॥

वर्षादूर्ध्वमजं मेषं मृगं वा विविधं बलिम् !
दद्यात् पूर्वं महेशानि ! ततस्तु जपमाचरेत् ।।१२।।
एकहायनतः काली सत्यं सत्यं सुसिद्धिदा ।
मूलमन्त्रेण रात्रौ च होमं कुर्याद् विचक्षणः ।।१३।।
मरीच-लाज-लवणैः सर्षपैर्मारणं भवेत् ।
महासङ्कटरोगे च न भयं जायते क्वचित् ।।१४।।

पूजा की सम्पूर्ण सामग्री एकत्रित कर साधक लाल वस्त्र, लाल फल तथा लाल रंग वाले पुष्पों से परा भगवती महाकाली का पूजन करें— हे महेशानि ! सर्वप्रथम जप करे। पश्चात् वर्ष भर जपोपरान्त बकरा अथवा भेंड़ा अथवा मृग तथा अन्यान्य विविध बलि देनी चाहिए। रात्रि में मूल मन्त्र से होम करना चाहिए। ऐसा करने से काली एक वर्ष में सिद्ध हो जाती हैं, यह सत्य है, यह सत्य है ॥११-१३॥

प्रेतपिण्डं समादाय गोलकं कारयेत्ततः ।
साध्यनामाङ्कितं कृत्वा शत्रुमय्यां च पुत्तलीम् ।।१५।।
जीवं तत्र विधायैव चिताग्नौ प्रक्षिपेत् ततः ।
एकायुतं जपं कृत्वा त्रिरात्रान्मरणं रिपोः ।।१६।।
महाज्वरो भवेत्तस्य तप्तताम्र-शलाकया ।
गुदाद्वारे प्रविन्यस्य सप्ताहान्मरणं रिपोः ।।१७।।

मरीच, लावा, नमक तथा सरसों को मिलाकर होम करने से मारण प्रयोग किया जाता है। इतना ही नहीं, उपर्युक्त विधि से होम करने पर महासङ्कट तथा रोगादि का भय नहीं रहता ॥१४॥

प्रेत का शरीर लेकर गोलक यन्त्र बनवाये, पुनः साध्य शत्रु का नाम लिखकर शत्रु का पुतला बनाये। उसमें शत्रु की प्राण-प्रतिष्ठा करें। फिर चिता की अग्नि में उसे फेंक कर जला देवे। तदनन्तर दस हजार मन्त्र का जप करें— ऐसा करने से शत्रु तीन रात्रि के भीतर मर जाता है ॥१५-१६॥

पुष्पसमर्पणविधिः

एकविंशतिदिनाद्यन्तं जपं कृत्वा, नित्यं १०८,
भुक्तौ मुक्तौ च शान्तौ च श्वेतपुष्पं विनिर्दिशेत् ।
आकृष्टो च वशीकारे रक्तं पुष्पं विनिर्दिशेत् ।।१८।।

जलती हुई ताँबे की सलाई उपर्युक्त विधि द्वारा निर्मित शत्रु के पुतला के गुदा द्वार में घुसेड़ दे तो शत्रु को महाज्वर चढ़ जाता है और वह सात रात्रि के भीतर ही मर जाता है ।।१७।।

पुष्प समर्पण विधि– प्रत्यङ्गिरा को पुष्प समर्पण का विधान कहते हैं— साधक भोग, मोक्ष तथा शान्ति प्राप्त करने के लिए इक्कीस दिन पर्यन्त निरन्तर जप के आदि तथा अन्त में १०८ की संख्या में श्वेत पुष्प समर्पण करे तो उसे भोग, मोक्ष एवं शान्ति प्राप्त होती है। इसी प्रकार आकर्षण एवं वशीकरण में जप के आदि तथा अन्त में १०८ की संख्या में लाल पुष्प समर्पित करना चाहिए ।।१८।।

स्तम्भने मोहने चैव पीतपुष्पं विनिर्दिशेत् ।
उच्चाटने मारणे च कृष्णपुष्पं विनिर्दिशेत् ।।१९।।
अनेनैव प्रकारेण ध्यानं स्यात् पुष्पवर्णकम् ।
एवं पुष्पविधिः प्रोक्तः पूजादौ जपकर्मणि ।।२०।।

इति श्री कुब्जिकातन्त्रस्थ चण्डोग्रशूलपाणितन्त्रे प्रत्यङ्गिरास्तोत्रं समाप्तम् ।।

स्तम्भन तथा मोहन कार्य में आद्यन्त एक सौ आठ (१०८) की संख्या में पीला पुष्प समर्पित करना चाहिए। उच्चाटन तथा मारण प्रयोग में आद्यन्त एक सौ आठ संख्या में काला पुष्प समर्पित करना चाहिए ।।१९।।

इसी प्रकार उन-उन कार्यों में उसी-उसी प्रकार के पुष्पों को लेकर भगवती का ध्यान भी करना चाहिए। पूजादि एवं जपादि कर्म में पुष्प का विधान इस प्रकार बतलाया है ।।२०।।

इस प्रकार हिन्दी टीका सहित प्रत्यङ्गिरा स्तोत्र समाप्त ।।

श्रीप्रत्यङ्गिरामन्त्रपुरश्चरण

ध्यानम् (मेरुतन्त्रे)

अथाऽतः सम्प्रवक्ष्यामि परकृत्या-निवारिणीम् ।
देवीं प्रत्यङ्गिरां नाम सर्वापद्-विनिवारिणीम् ।।१।।
ॐ अँ कँ चँ तथा टँ तँ पँ ह्मँ भों ह्रीं समुच्चरेत् ।
हुँस उक्त्वा हुँ तथाऽस्त्रं स्वाहान्तं षोडशाक्षरः ।।२।।

प्रत्यङ्गिरा मन्त्र पुरश्चरण का विधान :

सर्वप्रथम मेरुतन्त्र में उल्लिखित रीति से देवी का इस प्रकार ध्यान करें। शत्रु द्वारा प्रयुक्त परकृत्या (शत्रु द्वारा प्रयुक्त मारण क्रिया) तथा सम्पूर्ण विपत्तियों से रक्षा करने वाली देवी प्रत्यङ्गिरा के विषय में कहता हूँ ॥१॥

'ॐ अं कं चं टं तं पं ह्मं भों ह्रीं हुं सः हुं फट् स्वाहा' यह सोलह अक्षरों का प्रत्यङ्गिरा का मन्त्र है ॥२॥

मुनिर्विधाता छन्दोष्णिग् देवताः षट् प्रकीर्तिताः ।
महावायु-र्महापृथ्वी महाकाशस्तथैव च ।।३।।
महासमुद्रनामा च महापर्वत एव च ।
महाग्निश्चेति हुँ बीजं ह्रीं शक्तिः परिकीर्तिता ।।४।।
लज्जया तु षडङ्गानि षड्दीर्घान्वितयाऽऽचरेत् ।
मन्त्रदेवींस्ततो मन्त्री ध्यायेत् सुस्थिरमानसः ।।५।।

इस मन्त्र के ब्रह्मा ऋषि उष्णिक् छन्द है तथा महावायु, महापृथ्वी, महाकाश, महासमुद्र, महापर्वत और मदाग्नि ये छह देवता हैं, हुं बीज है एवं ह्रीं शक्ति कही गयी है ।।३-४।।

षड् दीर्घयुक्त लज्जा (ह्रीं) से षडङ्ग न्यास करे। फिर स्थिर चित्त से वक्ष्यमाण षड् देवता का ध्यान करें ।।५।।

षडङ्गन्यास का प्रकार :

ॐ ह्राँ हृदयाय नमः। ॐ ह्रीं शिरसि स्वाहा, ॐ ह्रूँ शिखायै वषट्, ॐ ह्रैं क्वचाय हुम्, ॐ ह्रौं नैत्रत्रयाय वौषट्, ॐ ह्रः अस्त्राय फट् ।

ध्यानम्-

नानारत्नार्चिराक्रान्तं वृक्षाम्भःस्त्रवणैर्युतम् ।
व्याघ्रादि-पशुभिर्व्याप्तं सानुयुक्तं गिरिं स्मरेत् ।।६।।
मत्स्य-कूर्मादि-बीजाढ्यं नवरत्न-समन्वितम् ।
घनच्छायं सकल्लोलमकूपारं विचिन्तयेत् ।।७।।
ज्वालावली-समाक्रान्तं जगत्त्रितयमद्भुतम् ।
पीतवर्णं महावह्निं संस्मरेच्छत्रुशान्तये ।।८।।

ध्यान– अनेक प्रकार के रत्नप्रभा से जगमगाते हुए, वृक्ष, झरना तथा व्याघ्र आदि पशुओं से, अनेक पर्वत-श्रेणियों से युक्त महापर्वत का ध्यान करना चाहिए। मत्स्य, कूर्मादि जन्तु ही जिसके बीज हैं, अनेक प्रकार के रत्नों से व्याप्त, घनी छाया वाले तथा कल्लोल (लहरों) से व्याप्त महा समुद्र का ध्यान करें। तीनों लोकों को अपनी लपटों से आक्रान्त करते हुए पीले वर्ण वाले महाग्नि का शत्रु को शान्त करने के लिए ध्यान करना चाहिए ।।६-८।।

त्वरा समुत्थरावौघमलिनं रुद्धभूदिवम् ।
पवनं संस्मरेद् विश्वजीवनं प्राणरूपतः ।।९।।
नदी-पर्वत-वृक्षादि-कलिताग्रास- सङ्कुला ।
आधारभूता जगतो ध्येया पृथ्वीह मन्त्रिणा ।।१०।।
सूर्यादिग्रह-नक्षत्र - कालचक्र - समन्वितम् ।
निर्मलं गगनं ध्यायेत् प्राणिनामाश्रयः पदम् ।।११।।

बहुत बड़ी आँधी के साथ शब्द करते हुए, पृथ्वी और आकाश को धूल युक्त बना कर, उसे अन्धा बनाते हुए, विश्व के जीवन एवं प्राण स्वरूप वायु का स्मरण करना चाहिए। मन्त्रवेत्ता साधक को नदी, पर्वत, वृक्षादि से व्याप्त, ग्राम से संयुक्त, सारे संसार की आधारभूता पृथ्वी का स्मरण करना चाहिए। सूर्यादि ग्रह-नक्षत्रों के काल चक्र से समन्वित, समस्त प्राणियों के आश्रय स्थान भूत निर्मल आकाश का ध्यान करना चाहिए।।९-११।।

पुरश्चरणमाह-

एवं षड्देवता ध्यात्वा सहस्राणि तु षोडश ।
जपेन्मन्त्रं दशांशेन षड्द्रव्यैर्होममाचरेत् ।।१२।।
व्रीहयस्तण्डुला आज्यं सर्षपाश्च यवास्तिलाः ।
एतैर्हुत्वा यथाभागं पीठे पूर्वोदिते यजेत् ।।१३।।

मालामन्त्रस्तत्रैव-

अथ प्रत्यङ्गिरामालामन्त्रः सिद्धः प्रकीर्त्यते-
ॐ ह्रीं नमः कृष्णवाससे शतेविश्वसाहस्रहिम् ।

पुनश्चरण प्रकार- इस प्रकार छह देवताओं का ध्यान कर सोलह हजार की संख्या में मन्त्र का जप करें। तदनन्तर षड्द्रव्यों (धान, चावल, घी, सरसों, यव और तिल) से उसका दशांश (१६००) होम करे। जप का दशांश होम कर पूर्वोक्त पीठ पर देवी का पूजन करें ॥१२-१३॥

अब माला मन्त्र जैसा कि वहाँ कहा गया है, उसे कहता हूँ—

प्रत्यङ्गिरा मालामन्त्र- 'ॐ ह्री नमः कृष्णवाससे

सिनि सहस्रदने महावले पराजिते ।।१४।।
प्रत्यङ्गिरे पदसैन्य-परकर्मपदं वदेत् ।
विध्वंसिनि परमन्त्रोत्सादिनीति ततो वदेत् ।।१५।।
सर्वभूतेति दमनि सर्वदेवान् वदेत् ततः ।
बन्धयुग्मं सर्वविद्या द्विश्छिन्धि क्षोभय-द्वयम् ।।१६।।
परयन्त्राणीति वदेत् स्फोटय द्वितयं ततः ।
सर्वशृङ्खलाँस्त्रोटय त्रोटय ज्वल चोच्चरत् ।।१७।।
ज्वालाजिह्वे करालेति वदने प्रत्यमुच्चरेत् ।
गिरे ह्रीं नम इत्येष सपादशतवर्णवान् ।।१८।।
ब्रह्माऽनुष्टुब्-मुनिश्छन्दो देवी प्रत्यङ्गिरा मता ।।१९।।

शतसाहस्रहिंसिनि सहस्रवदने महाबले अपराजिते प्रत्यङ्गिरे परसैन्य-परकर्मविध्वंसिनि परमन्त्रोत्सादिनि सर्वभूतदमनि सर्वदेवान् बन्ध बन्ध सर्वविद्याश्छिन्धि छिन्धि क्षोभय क्षोभय परयन्त्राणि स्फोटय स्फोटय सर्वशृङ्खलांस्त्रोटय त्रोटय ज्वलज्ज्वालाजिह्वे करालवदने प्रत्यङ्गिरे ह्रीं नमः ।'

यह मालामन्त्र १२५ अक्षरों का है ।।१४-१८।।

बीजशक्ती तारमाये कृत्यानाशेति योजनम् ।
षडङ्गानां विधिश्चाऽत्र षड्दीर्घान्वितमायया ।।२०।।

ध्यानम्-

सिंहारूढाऽतिकृष्णाङ्गी ज्वालावक्त्रां भयङ्कराम् ।
शूलखड्गकरां वस्त्रे दधतीं नूतने भजे ।।२१।।

पुरश्चरणम्-

अयुतं प्रजपेन्मन्त्रं सहस्रं तिलराजिकाः ।
हुत्वा सिद्धमनुर्मन्त्री प्रयोगेषु शतं जपेत् ।।२२।।

इस मन्त्र के देवता ब्रह्मा हैं, अनुष्टुप् छन्द है, प्रत्यङ्गिरा देवता हैं, ॐ यह बीज है, ह्रीं शक्ति है। कृत्यानाश (शत्रु-कृत मारण प्रयोग) के लिए इसका विनियोग है। इस मन्त्र का षड्दीर्घयुक्त 'ह्रीं' से षड्गन्यास करना चाहिए ॥१९-२०॥

ध्यान– मालामन्त्र-जप के लिए ध्यान कहते हैं— सिंह पर चढ़ी हुई, अत्यन्त काले मुख से ज्वाला उगलने के कारण महाभयानक, हाथों में त्रिशूल तथा खड्ग लिये, नूतन वस्त्र पहने देवी प्रत्यङ्गिरा का भजन करता हूँ ॥२१॥

ग्रह-भूतादिकारिष्टं सिञ्चेन्मन्त्रं जपन् जलैः ।
विनाशयेत् परकृतं यन्त्र-मन्त्रादि-साधनम् ।।२३।।
अथ मन्त्रान्तरं (सिद्धान्तसंग्रहे)
ॐ यां कल्पयन्ति नोऽरयः क्रूरां कृत्यां वधू मिव ।
तां ब्रह्मणाऽपनिर्णुद्मः प्रत्यक्-कर्तारमिच्छतु ।।२४।।
ह्रीं मुन्याद्या विनियोगान्ता मालामन्त्रवदस्य तु ।
षडङ्गानि च पादेन पादार्धैश्चरणेन च ।।२५।।

पुरश्चरण-इस मन्त्र का दशहजार जप तथा तिल एवं राई से एक हजार हवन करना चाहिए। मन्त्र सिद्ध कर लेने पर साधक काम्यप्रयोगों में केवल एक सौ की संख्या में जप करे ।।२२।।

ग्रह-भूतादिजन्य अरिष्ट निवारण के लिए मन्त्र का जप करते हुए रोगी पर जल छिड़कते रहना चाहिए। इस मन्त्र का जापक साधक शत्रु के द्वारा प्रयुक्त यन्त्र-मन्त्रादि समस्त साधन विनष्ट कर देता है ।।२३।।

सिद्धान्त संग्रह में कहा गया प्रत्यङ्गिरा का अन्य मन्त्र–
ॐ यां कल्पयन्ति नोऽरयः क्रुरां कृत्यां बधूमिव ।
तां ब्रह्मणाऽपनिर्णुद्मः प्रत्यक् . कर्त्तारमिच्छतु ।।२४।।

कुर्याद् वेदादिषड्दीर्घ-हृल्लेखापुटितेन च ।
शिरो-भ्रू-मध्यवदन-गल बाहुद्वयेष्वथ ।।२६।।
हृन्नाभि-पार्श्व-कट्यन्धु-पादेषु पदशो न्यसेत् ।
व्यापकान्तं समस्तेन कृत्वा ध्यायेन् महेश्वरीम् ।।२७।।
खड्गचर्मधरां कृष्णां मुक्तकेशीं विवाससम् ।
दंष्ट्राकरालवदनां भीषाभां सर्पभूषणाम् ।
ग्रसन्तीं वैरिणं ध्यायेत् प्रेरितां शिवतेजसा ।।२८।।

इस मन्त्र के ऋषि, छन्द तथा देवता एवं विनियोग पूर्ववत् है। इसका षडङ्गन्यास एक पाद, पादका अर्धभाग तथा पुनः एक चरण से करना चाहिए। उसे वेदादि ॐ षड्दीर्घहृल्लेखा (ह्रीं) से सम्पुटित करना चाहिए। तथा मन्त्र के एक-एक पद से शिर, भ्रू, मध्य वदन, गला, दोनों बाहू, हृदय, नाभि, पार्श्व, कटिभाग, दोनों कन्धा तथा दोनों पैर, तदनन्तर समस्त मन्त्र से सर्वाङ्ग न्यास करना चाहिए ।।२५-२७।।

मन्त्रमहादधि के अनुसार षडङ्ग न्यास विधि-

षडङ्गन्यासः-

ॐ ह्रां यां कल्पयन्ति नोरयः ह्रां हृदयाय नमः ।

ॐ ह्रीं क्रूरां कृत्यां ह्रीं शिरसे स्वाहा।
ॐ ह्रूं वधूमिव ह्रूं शिखायै वषट्।
ॐ ह्रैं ब्रह्मणा ह्रैं कवचाय हुम्।
ॐ ह्रौं अपनिर्णुद्मः ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्।
ॐ ह्रः प्रत्यक्कर्त्तारमृच्छतु ह्रः अस्त्राय फट्।

पदन्यासः- ॐ ह्रीं यां ह्रीं शिरसि।
ॐ ह्रीं कल्पयन्ति ह्रीं भ्रूमध्ये।
ॐ ह्रीं नो ह्रीं मुखे।
ॐ ह्रीं अरयः ह्रीं कण्ठे।
ॐ ह्रीं क्रूरां ह्रीं दक्षिणबाहौ।
ॐ ह्रीं कृत्यां ह्रीं वामबाहौ।
ॐ ह्रीं बधूम् ह्रीं हृदि।
ॐ ह्रीं इव ह्रीं नाभौ।
ॐ ह्रीं हां ह्रीं दक्षिण ऊरौ।
ॐ ह्रीं ब्रह्मणा ह्रीं वाम ऊरौ।
ॐ ह्रीं अपनिर्णुद्मः ह्रीं दक्षिणजानौ।
ॐ ह्रीं प्रत्यक् ह्रीं वामजानौ।
ॐ ह्रीं कर्त्तारं ह्रीं दक्षिणपादे।
ॐ ह्रीं ऋच्छतु ह्रीं वामपादे।

पुरश्चरणमाह-

अयुतं प्रजपेदेनं मन्त्री प्रयतमानसः ।
दशाशं जुहुयात् पश्चादपामार्गेध्म-राजिकाम् ।।२९।।
सर्पिषा च समायुक्तां ततः सिद्धो भवेन्मनुः ।
प्रयोगेषु जपेन्मन्त्रमष्टोत्तरशतं बुधः ।

अब इस मन्त्र का ध्यान कहते हैं—

कृष्णवर्णवाली, जो देवी अपने हाथों में खड्ग तथा चर्म धारण की हुई हैं, जिनके केश सर्वथा विखरे हैं और जो वस्त्ररहित (नङ्गी) हैं, जिनके दाँत अत्यन्त भयानक हैं, सर्प का आभूषण धारण करने से जो अत्यन्त भयङ्कर हैं तथा जो शिव माया की प्रेरणा से अपने समस्त बैरियों को ग्रसित कर रही हैं ऐसी प्रत्यङ्गिरा का ध्यान करना चाहिए ।।२८।।

पुरश्चरण का विधान

इस मन्त्र का साधक स्वस्थचित्त हो दश हजार जप करे। पुनः अपामार्ग की लकड़ी से राई को घी में मिला कर

तावतैव तु होमेन परकृत्या विनश्यति ।।३०।।

प्रत्यङ्गिरायन्त्रम् (मेरुतन्त्रे)

त्रिकोणं च चतुःपत्रं वसुपत्रं ततः परम् ।
कलापत्रं च भूविम्बं चतुरस्रत्रयावृतम् ।।३१।।

इति प्रत्यङ्गिरास्तोत्रे प्रत्यङ्गिरामन्त्रपुरश्चरणं समाप्तम् ।

जप करे तो मन्त्र सिद्ध हो जाता है। मन्त्र को सिद्ध कर लेने पर काम्य प्रयोग के लिए एक सौ आठ बार जप करे। फिर उतनी ही संख्या में होम करे तो शत्रु के द्वारा किया गया अभिचार (मारण प्रयोग) नष्ट हो जाता है ॥२९-३०॥

मेरुतन्त्रोक्त प्रत्यङ्गिरा यन्त्र का प्रकार

त्रिकोण बनाकर उस पर चतुर्दल कमल फिर अष्टदल, फिर सोलह दल का कमल बनाकर उसमें तीन चौकोर भूपुर बनाना चाहिए ॥३१॥

इस प्रकार हिन्दी टीका सहित प्रत्यङ्गिरा मन्त्र पुरश्चरण समाप्त ।

प्रत्यङ्गिराकवचम्

देव्युवाच

भगवन् सर्वधर्मज्ञ सर्वशास्त्रार्थ-पारग ! ।
देव्याः प्रत्यङ्गिरायाश्च कवचं यत् प्रकाशितम् ।
सर्वार्थसाधनं नाम कथयस्व मयि प्रभो ! ।।१।।

भैरव उवाच

शृणु देवि ! प्रवक्ष्यामि कवचं परमाद्भुतम् ।।२।।
सर्वार्थसाधनं नाम त्रैलोक्ये चाऽतिदुर्लभम् ।
सर्वसिद्धिमयं देवि ! सर्वैश्वर्यप्रदायकम् ।।३।।

देवी ने कहा– हे भगवन् ! हे सर्वधर्मज्ञ ! हे सम्पूर्ण-शास्त्रों के पारगामी भैरव प्रभो ! सर्वार्थसाधन प्रत्यङ्गिरा देंवी का जो कवच आपने प्रकाशित किया है। हे प्रभो ! यह कवच आप मुझसे कहिए ।।१।।

श्री भैरव बोले– हे देवि ! अत्यन्त अद्‌भुत सर्वार्थ-साधन नाम वाले उस कवच को मैं तुमसे कहता हूँ।

पठनाच्छ्रवणान्मर्त्यस्त्रैलोक्यैश्वर्यभाग् भवेत् ।
सर्वार्थसाधकस्याऽस्य कवचस्य ऋषिः शिवः ।।४।।
छन्दो विराट् पराशक्तिर्जगद्धात्री च देवता ।
धर्मा-ऽर्थ-काम-मोक्षेषु विनियोगः प्रकीर्तितः ।।५।।
प्रणवं मे शिरः पातु वाग्भवं च ललाटकम् ।
ह्रीं पातु दक्षनेत्रं मे लक्ष्मीर्वामं सुरेश्वरी ।।६।।

सावधान होकर सुनो। यह त्रैलोक्य में सर्वथा दुर्लभ है। इस कवच को पढ़ने तथा सुनने से मनुष्य त्रिलोकी के ऐश्वर्य का स्वामी बन जाता है ।।२-३।।

विनयोग– सर्वार्थसाधन नामक इस कवच के शिव ऋषि हैं, विराट् छन्द है, पराशक्ति जगद्धात्री इसके देवता हैं तथा धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष चारों पुरुषार्थों में इसका विनियोग कहा गया है ।।४-५।।

प्रणव हमारे शिर की रक्षा करे। वाग्भव (ऐं) ललाट की रक्षा करे। ह्रीं दाहिने नेत्र की तथा सुरेश्वरी लक्ष्मी (श्रीं) बाँये नेत्र की रक्षा करें ।।६।।

प्रत्यङ्गिरादक्षकर्णं वामे कामेश्वरी तथा।
लक्ष्मीः प्राणं सदा पातु वदनं पातु केशवः ॥७॥
गौरी तु रसनां पातु कण्ठं पातु महेश्वरः।
स्कन्धदेशं रतिः पातु भुजौ तु मकरध्वजः ॥८॥
शङ्खं निधिः करौ पातु वक्षः पद्मनिधिस्तथा।
ब्राह्मी मध्यं सदा पातु नाभिं पातु महेश्वरी ॥९॥
कौमारी पृष्ठदेशं तु गुह्यं रक्षतु वैष्णवी।
वाराही च कटिं पातु चैन्द्री पातु पदद्वयम् ॥१०॥

प्रत्यङ्गिरा दाहिने कान की तथा कामेश्वरी बाँयें कान की रक्षा करें। लक्ष्मी सर्वदा प्राणों की और केशव मुख की रक्षा करें। गौरी रसना की, महेश्वर कण्ठ की, रति स्कन्ध प्रदेश की तथा मकरध्वज दोनों भुजाओं की रक्षा करें। शङ्खनिधि दोनों हाथों की, पद्मनिधि वक्षःस्थल की, ब्राह्मी मध्यभागकी तथा महेश्वरी नाभिस्थान की रक्षा करें। कौमारी पृष्ठ की, वैष्णवी गुह्य स्थान की, वाराही कटि प्रदेश की एवं ऐन्द्री दोनों पैरों की रक्षा करें ॥७-१०॥

भार्या रक्षतु चामुण्डा लक्ष्मी रक्षतु पुत्रकान् ।
इन्द्रः पूर्वे सदा पातु आग्नेय्यामग्निदेवता ।।११।।
याम्ये यमः सदा पातु नैर्ऋत्यां निर्ऋतिस्तथा ।
पश्चिमे वरुणः पातु वायव्यां वायुदेवता ।।१२।।
सौम्यां सोमः सदा पातु चैशान्यामीश्वरो विभुः ।
ऊर्ध्वं प्रजापतिः पातु ह्यधश्चाऽनन्तदेवता ।।१३।।

चामुण्डा भार्या की, लक्ष्मी पुत्रों की, इन्द्र पूर्व दिशा की तथा अग्नि देवता आग्नेय कोण में हमारी रक्षा करें। दक्षिण दिशा में यम, नैर्ऋत्य दिशा में निर्ऋति, पश्चिम में वरुण तथा वायव्य कोण में वायु देव हमारी रक्षा करें। उत्तर दिशा में सोम, ईशान कोण में विभु-ईश्वर, ऊपर प्रजापति तथा अध:प्रदेश में अनन्त देवता हमारी रक्षा करें ।।११-१३।।

राजद्वारे श्मशाने च अरण्ये प्रान्तरे तथा ।
जले स्थले चाऽन्तरिक्षे शत्रूणां निबहे तथा ।।१४।।
एताभिः सहिता देवी चतुर्बीजा महेश्वरी ।
प्रत्यङ्गिरा महाशक्तिः सर्वत्र मां सदाऽवतु ।।१५।।
इति ते कथितं देवि ! सारात्सारं परात् परम् ।
सर्वार्थसाधनं नाम कवचं परमाऽद्भुतम् ।।१६।।

राजद्वार, श्मशान, अरण्य सर्वथा निर्जन प्रदेश, जल, स्थल, अन्तरिक्ष, शत्रुगणों से घिरे रहने पर उक्त दशों दिशाओं के देवताओं के साथ चतुर्बीजा महेश्वरी हमारी रक्षा करें। तथा महाशक्ति प्रत्यङ्गिरा हमारी सर्वत्र सर्वदा रक्षा करें ॥१४-१५॥

इस प्रकार हे देवि ! सभी सारों का सारभूत, पर से भी पर, परम अद्भुत सर्वार्थ-साधन नाम का कवच मैंने तुमसे कहा ॥१६॥

फलश्रुति-

अस्याऽपि पठनात् सद्यः कुबेरोऽपि धनेश्वरः ।
इन्द्राद्याः सकला देवाः धारणात् पठनाद्यतः ।।१७।।
सर्वसिद्धीश्वराः सन्तः सर्वैश्वर्यमवाप्नुयुः ।
पुष्पाञ्जल्यष्टकं दत्त्वा मूलेनैव सकृत् पठेत् ।।१८।।
संवत्सरकृतायास्तु पूजायाः फलमाप्नुयात् ।
प्रीतिमन्येऽन्यतः कृत्वा कमला निश्चला गृहे ।।१९।।

फलश्रुति- इस कवच का नित्य पाठ करने से कुबेर भी धनेश्वर बन गये। इन्द्रादि समस्त देवता, इसके धारण करने एवं पाठ करने से सभी सिद्धियों के ईश्वर बन कर सर्वैश्वर्य सम्पन्न हो गये। इसका एक बार पाठ कर मूलमन्त्र द्वारा आठ पुष्पाञ्जलियाँ देवी को समर्पित करनी चाहिये ।।१७-१८।।

ऐसा करने से साधक को एक संवत्सर में जितना पुण्य होता है उसका फल उसे एक ही बार में प्राप्त हो जाता है।

वाणी च निवसेद् वक्त्रे सत्यं सत्यं न संशयः ।
यो धारयति पुण्यात्मा सर्वार्थसाधनाभिधम् ।।२०।।
कवचं परमं पुण्यं सोऽपि पुण्यवतां वरः ।
सर्वैश्वर्ययुतौ भूत्वा त्रैलोक्यविजयी भवेत् ।।२१।।
पुरुषो दक्षिणे बाहौ नारी वामभुजे तथा ।
बहुपुत्रवती भूयात् बन्ध्याऽपि लभते सुतम् ।।२२।।

इस कवच के प्रतिदिन पाठ करने से लक्ष्मी और सरस्वती आपस में प्रेम कर कमला तो निश्चल भाव से घर में तथा सरस्वती मुख में निवास करती हैं, यह सत्य है, सत्य है, इसमें संशय नहीं ।।१९½।।

जो पुण्यात्मा व्यक्ति सर्वार्थ साधन नामक इस कवच को लिखकर धारण करता है वह सभी पुण्यात्माओं में श्रेष्ठ बन जाता है तथा सभी ऐश्वर्यों से परिपूर्ण होकर त्रैलोक्य विजयी हो जाता है ।।२०-२१।।

इस कवच को पुरुष अपने दाहिने हाथ में और स्त्री

ब्रह्मास्त्रादीनि शस्त्राणि नैव कृन्तन्ति तत्तनुम् ।
एतत् कवचमज्ञात्वा यो जपेत् परमेश्वरीम् ।
दारिद्र्यं परमं प्राप्य सोऽचिरान् मृत्युमाप्नुयात् ।।२३।।

इति श्रीरुद्रयामले तन्त्रे पञ्चाङ्गखण्डे प्रत्यङ्गिरायाः
सर्वार्थसाधनं नाम कवचं समाप्तम् ।

●

बाँयें हाथ में धारण करे तो बन्ध्या भी पुत्र प्राप्त कर बहुपुत्रवती हो जाती है ॥२२॥

इस कवच को धारण करने वाले पुरुष के शरीर को ब्रह्मास्त्र आदि भी भेदन नहीं कर सकते। इस कवच का बिना पाठ किये जो प्रत्यङ्गिरा मन्त्र का जप करता है, वह अत्यन्त दरिद्र होकर शीघ्रातिशीघ्र मृत्यु को प्राप्त कर सकता है ॥२३॥

इस प्रकार हिन्दीटीका सहित प्रत्यङ्गिरा-कवच समाप्त ।

●

प्रत्यङ्गिरा-पटलम्

मेरुपृष्ठे सुखासीनं भैरवं परमेश्वरम् ।
प्रसन्नवदनं देवं नागयज्ञोपवीतिनम् ।।१।।
गजचर्मपरीधानं भूतिभूषणविग्रहम् ।
कपालमालाभरणं गङ्गावीचिरवाकुलम् ।।२।।
चन्द्रार्द्धार्चितमूर्द्धानं सर्पकङ्कणनूपुरम् ।
खट्वाङ्ग-शूल-पाशाऽसि-विभूषितकराम्बुजम् ।।३।।
वामाङ्कस्थित-गौरीशं देव-गन्धर्व-सेवितम् ।
यक्षेन्द्र-किन्नरनुतं ब्रह्मा-ऽच्युत-नमस्कृतम् ।।४।।

मेरु पृष्ठ पर प्रसन्न मुख से बैठे हुए, नाग यज्ञोपवीत धारण किये हुए, गजचर्म विभूषित, विभूति का भूषण अङ्गों में लगाये हुए, कपाल-माला विभूषित, गङ्गा तरङ्गों से शब्दायमान चन्द्रमा को अपने मस्तक में धारण किये हुए, सर्प का कङ्कण तथा नूपुर पहने, अपने हाथों में खट्वाङ्ग, शूल, पाश एवं खड्ग लिये हुए, वाम भाग में

भैरव उवाच

प्रहसन्तं जयन्तं च ध्यायन्तं च मुहुर्मुहुः ।
स्मितपूर्वं प्रणम्यादौ बद्धाञ्जलिपुटं ततः ।
उत्थाय पार्वती देवी भगवन्तमभाषत ।।५।।

देव्युवाच

भगवंस्त्वं परो देवस्त्रैलोक्य-प्रभुरीश्वरः ।।६।।
त्रिगुणात्मा गुणातीतश्चित्स्वरूपो निरञ्जनः ।
सकलो निष्कलो देवः सत्तारूपो महेश्वरः ।।७।।

गौरी से अलङ्कृत, देव-गन्धर्व सेवित, कुबेरादि किन्नर गणों द्वारा प्रणाम किये जाते हुए, ब्रह्मा, विष्णु से नमस्कृत, बारम्बार जय-विजय नामक अपने गणों का ध्यान करते हुए इस प्रकार के सदाशिव को मन्द स्मित पूर्वक प्रणाम एवं हाथ जोड़ कर खड़ी होकर पार्वती ने इस प्रकार पूछा ।।१-५।।

देवी ने कहा— हे भगवन् ! परदेव हैं और त्रैलोक्य के प्रभु एवं सर्वसमर्थ हैं, त्रिगुणात्मा होते हुए भी गुणातीत हैं,

त्वं किं जपसि देवेश ममाद्य विदितं तु यत् ।
तत्समाचक्ष्व सकलं यद्यहं तव वल्लभा ।।८।।

भैरव उवाच

एतद् गुह्यतमं लोके न कस्य कथितं मया ।
तथापि तव देवेशि ! भक्त्या गुह्यं वदाम्यहम् ।।९।।
या देवी लोकमातेति महामाहेश्वरी शिवा ।
प्रत्यङ्गिरेति विख्याता षड्विंशति सुवर्णिका ।।१०।।

चित्स्वरूप एवं निरञ्जन हैं, साकार एवं निराकार भी हैं, सत्ता रूप से सर्वत्र रह कर भी महेश्वर हैं। हे देवेश ! आप निरन्तर किसका जप करते हैं, जिसका ज्ञान मुझे आज तक नहीं हुआ। यदि मैं आप की प्राणवल्लभा हूँ तो विस्तार पूर्वक मुझे बताइए ।।६-८।।

भैरव बोले- हे देवि ! यह बहुत गुप्त है, जिसे आज तक मैंने किसी से नहीं बताया, तथापि हे देवेशि ! गुप्त होने पर भी तुम्हारी भक्ति के वश होकर मैं उसे कह रहा हूँ ।।९।।

सृजते सकलं विश्वं बिभर्ति परमाम्बिका।
अन्ते संहारकर्त्री च संहरिष्यति तामसी ।।११।।
गुणत्रयमयी विद्या महादारिद्र्यवारिणी।
तस्याः पञ्चाङ्गमीशानि पठाम्यहमहर्निशम् ।।१२।।
जपे विद्यां सर्वमेतां सर्मनामसहस्रकम्।
स्तवं मन्त्रमयं देवि! पठामि परमेश्वरीम् ।।१३।।

जो देवी लोक माता, महा माहेश्वरी, शिवा एवं प्रत्यङ्गिरा के नाम से जानी जाती हैं, जो छब्बीस अक्षरों के मन्त्र से युक्त हैं ।।१०।।

जो परमा अम्बिका सारे विश्व की सृष्टि करती हैं, पालन करती हैं तथा अन्त में तामसी रूप धारण कर संहारकर्त्री बन कर इस सृष्टि का संहार करेगी ।।११।।

जो त्रिगुणात्मिका महाविद्या हैं, महादारिद्र्य को वारण करने वाली हैं। हे ईशानि! दिन-रात मैं उन्हीं का पञ्चाङ्ग पढ़ता रहता हूँ ।।१२।।

मैं उस महाविद्या के मन्त्र का जप करता हूँ। कवच

तत्प्रसादादहं देवि त्रैलोक्यप्रभुरीश्वरः ।
भैरवो भैरवादेशः सृष्टि-स्थिति-लयात्मकः ।।१४।।

देव्युवाच

भगवन् देवदेवेश ! निःशेषकरुणाकर ।
देव्याः प्रत्यङ्गिरायाश्च पञ्चाङ्गं वक्तुमर्हसि ।।१५।।

भैरव उवाच

पटलं पद्धतिं चैव वर्म-नामसहस्रकम् ।
स्तोत्रं मन्त्रमयं देवि ! वक्ष्ये लोकहितेच्छया ।।१६।।

तथा नामसहस्र एवं उनके मन्त्रमय स्तोत्र का दिन-रात पाठ करता हूँ ।।१३।।

हे देवि ! मैं उन्हीं के प्रसाद से त्रैलोक्य का प्रभु ईश्वर तथा भैरव हूँ। मेरी आज्ञा सब पालन करते हैं तथा मैं ही इस जगत् की सृष्टि, स्थिति एवं प्रलय करता हूँ ।।१४।।

देवी ने पूछा– हे भगवन् ! हे देवदेवेश ! हे अशेष करुणाकर ! प्रत्यङ्गिरा देवी का पञ्चाङ्ग मुझे बताने की कृपा करें ? ।।१५।।

अत्रादौ पटलं दिव्यं मूलमन्त्रमयं परम् ।
सयन्त्र-मन्त्रसहितं प्रयोगसहितं शृणु ।।१७।।

मन्त्रोद्धारः

प्रणवं वाग्भवं म या लक्ष्मीः प्रत्यङ्गिरेति च ।
मम रक्ष द्वयं देवि ! मम शत्रून् पदं मयि ।।१८।।
भक्षद्वयं प्रणवं च स्वाहान्तो मन्त्र उत्तमः ।
एषा विद्या मयाख्याता परमानन्ददायिनी ।।१९।।

श्री भैरव ने कहा– पटल, पद्धति, कवच, सहस्रनाम और मन्त्रमयी स्तुति ये प्रत्यङ्गिरा के पञ्चाङ्ग कहे गये हैं। इन्हें मैं लोक-कल्याण के लिए कहता हूँ। हे देवि ! सर्वप्रथम मन्त्रमय, दिव्य पर यन्त्र-मन्त्र सहित, दिव्य पटल को प्रयोग के साथ सुनो ॥१६-१७॥

सर्वप्रथम मन्त्रोद्धार कहते हैं— प्रणव (ॐ), वाग्भव (ऐं), माया (ह्रीं), लक्ष्मी (श्रीं) फिर प्रत्यङ्गिरे पुनः मम रक्ष रक्ष फिर मम शत्रून्, फिर दो बार भक्ष (भक्ष भक्ष) फिर प्रणव (ॐ) तथा स्वाहा .यह मन्त्र २६ अक्षरों का है। इसका स्वरूप ऐसा है, **'ॐ ऐं ह्रीं श्रीं प्रत्यङ्गिरे मम रक्ष**

भोगदा सुखदा देवि राज्यदा धनदा तथा ।
सिद्धिमोक्षप्रदा विद्या परा सायुज्यदायिनी ।।२०।।
गुरुपादप्रसादेन श्रीविद्या यदि लभ्यते ।
विना गुरुपदेशेन नाऽन्यत् सिद्ध्यति भारती ।।२१।।
नैस्वान्तरायो न क्लेशो न शौचनियमोऽपि वा ।
साक्षात् सिद्धिप्रदो देवि मन्त्रोऽयं भोगमोक्षदः ।।२२।।

रक्ष मम शत्रून् भक्ष भक्ष ॐ स्वाहा ।' यह प्रत्यङ्गिरा का सर्वश्रेष्ठ मन्त्र है। हे देवि ! यह परमानन्द दायिनी विद्या मैंने तुमसे कही ॥१८-१९॥

यदि गुरुचरण की कृपा से यह श्री विद्या प्राप्त हो जाय तो साधक को वह भोग, सुख, राज्य, धन, सिद्धि तथा मोक्ष प्रदान करने वाली है किं बहुना परा तथा सायुज्य दायिनी है। बिना गुरु की कृपा के इस विद्या को प्राप्त करने का दूसरा साधन नहीं है ॥२०-२१॥

हे देवि ! इस विद्या की सिद्धि करने में किसी प्रकार के

वर्णलक्षं पुरश्चर्या तदर्द्धं वा महेश्वरि।
एकलक्षावधिं कुर्यान्नातो न्यूनं कदाचन ।।२३।।
जपाद् दशांशतो होमस्तद्दशांशेन तर्पणम्।
मार्जनं तद्दशांशेन तद्दशांशेन भोजनम्।।२४।।

विघ्न और क्लेश की सम्भावना नहीं है। पवित्र रहने का नियम भी नहीं है। हे देवि! इस मन्त्र से सिद्धि तो प्राप्त होती ही है भोग तथा मोक्ष भी प्राप्त होता है ।।२२।।

इसमें जितने वर्ण आये हैं, उतने लक्ष जप से पुरश्चरण का विधान है अथवा हे महेश्वरि! वर्णों की संख्या का आधा लक्ष भी जप करने से पुरश्चर्या होती है। इस मन्त्र का एक लाख जप तो अवश्य ही करना चाहिए। इससे न्यून की संख्या में कदापि जप नहीं करना चाहिये ।।२३।।

जप का दशांश होम, होम का दशांश तर्पण, तर्पण का दशांश मार्जन तथा मार्जन का दशांश ब्राह्मण भोजन कराना चाहिये ।।२४।।

वटेऽरण्ये श्मशाने च शून्यागारे चतुष्पथे ।
अर्धरात्रे च मध्याह्ने पुरश्चरणमारभेत् ।।२५।।
जीवहीनो यथा देहः सर्वकर्मसु न क्षमः ।
पुरश्चरणहीनो यो न मन्त्रः फलदायकः ।।२६।।
मन्त्रमुत्कालयेदादौ मन्त्रं स जीवयेत्ततः ।
निष्कौटिल्यं चेरत्पश्चात्ततः शापहरीं जपेत् ।।२७।।

वटवृक्ष के नीचे अरण्य, श्मशान, निर्जन गृह तथा चतुष्पथ युक्त स्थान में अर्धरात्रि अथवा मध्याह्न काल में पुरश्चरण प्रारम्भ करना चाहिए ।।२५।।

जिस प्रकार जीवहीन देह किसी भी काम के योग्य नहीं, उसी प्रकार पुरश्चरण रहित मन्त्र भी फलदायक नहीं होता ।।२६।।

सर्वप्रथम मन्त्र को कीलक रहित बनाना चाहिए। फिर प्राण प्रतिष्ठा कर उसे सजीव करना चाहिए। तदनन्तर संस्कार कर उसका दोष दूर करना चाहिए, फिर शाप रहित करना चाहिए। इस प्रकार सिद्ध किये गये शुद्ध मन्त्र का

सिद्धमन्त्रं जपेच्छुद्धं ततः सम्पुटितं चरेत् ।
क्रमेणानेन देवेशि ! श्रीविद्यां यो जपेत्सुधीः ।।२८।।
स साधको भवेल्लोके भोगी सायुज्यमाप्नुयात् ।
मन्त्रस्यास्य मुनिश्चैव महाभैरव एव च ।।२९।।
अनुष्टुप् छन्द इत्युक्तः श्रीमत्प्रत्यङ्गिरेति च ।
देवतास्यापरा बीजंशक्तिः स्वाहा च कीलकम् ।।३०।।

सम्पुट पूर्वक जप करना चाहिए। हे देवि ! जो बुद्धिमान् साधक इस क्रम से श्री विद्या का जप करता है ॥२७-२८॥

वही इस उत्तम मन्त्र को सिद्ध कर उत्तम साधक होता है। जो भोग और मोक्ष दोनों प्राप्त कर लेता है।

विनियोग विधि– ॐ अस्य श्रीप्रत्यङ्गिरामन्त्रस्य महाभैरवऋषिरनुष्टुप् छन्दः, श्रीमती प्रत्यङ्गिरा देवता, ॐ ह्रीं बीजशक्तिः, स्वाहाकीलकं भोगापवर्गसिद्ध्यर्थं प्रत्यङ्गिरामन्त्रजपे विनियोगः।

विनियोगार्थ– इस महामन्त्र के महा भैरव ऋषि हैं,

भोगापवर्गसिद्ध्यर्थं विनियोग इति स्मृतः ।
ध्यानमस्याः प्रवक्ष्यामि सर्वतन्त्रेषु गोपितम् ।।३१।।
आशाम्बरा मुक्तकचा घनच्छबि-
ध्येया सचर्मासिकराहिभूषणा ।
दंष्ट्रोग्रवक्त्रा ग्रसिता हिता त्वधा
प्रत्यङ्गिरा शङ्करतेजसेरिता ।।३२।।

अनुष्टुप् छन्द है, देवी प्रत्यङ्गिरा देवता हैं, परा (ह्रीं) बीज और शक्ति है तथा स्वाहा कीलक है ।।३०।।

भोगापवर्ग (भोग-मोक्ष) की सिद्धि के लिए इसका विनियोग कहा गया है। सभी तन्त्रों में सर्वथा गुप्त प्रत्यङ्गिरा का ध्यान कहता हूँ ।।३१।।

दिगम्बर वेष धारण किये, बिखरे हुए बालों वाली, बादल के समान कान्ति वाली, हाथों में तलवार और ढाल लिये हुए, सर्पों का आभूषण धारण की हुई, महा भयानक दाँतों से युक्त मुख वाली श्री शङ्कर की प्रेरणा प्राप्त कर शत्रुओं को चबाती हुई प्रत्यङ्गिरा देवी का ध्यान करना चाहिए ।।३२।।

यन्त्रोद्धारं प्रवक्ष्यामि सर्वसिद्धिप्रवर्तकम् ।
सर्वसम्मोहनं चक्रं सर्वाशापरिपूरकम् ।।३३।।
बिन्दुत्रिकोणं वसुकोणयुक्तं
वृत्ताष्टयन्त्रं च त्रिवृत्तयुक्तम् ।
भूगेहलक्ष्मीखचितं च सिद्धिदं
प्रात्यङ्गिरं चक्रमेतन्मयोक्तम् ।।३४।।

सम्पूर्ण सिद्धियों को प्रदान करने वाले प्रत्यङ्गिरा यन्त्र का उद्धार कहता हूँ। जो सम्पूर्ण मनोरथों को परिपूर्ण करने वाला है, इसे सर्वसम्मोहन चक्र भी कहते हैं ।।३३।।

बिन्दु उसके बाद त्रिकोण फिर अष्टकोण, फिर वृत्त (गोला) फिर अष्टदल कमल पुनः तीन वृत्त तदनन्तर सर्वथा चौकोर तीन भूपुर, जो लक्ष्मी (श्रीं) से युक्त हो। इस प्रकार सिद्धि प्रदान करने वाला प्रत्यङ्गिरा चक्र नामक यन्त्र का स्वरूप मैंने कहा ।।३४।।

लयाङ्गमस्य वक्ष्यामि यन्त्रराजस्य पार्वति ।
येन श्रवणमात्रेण कोटिपूजाफलं लभेत् ।।३५।।
इन्द्राद्या लोकपालाश्च ब्रह्मानन्ताङ्किताः प्रिये ।
वज्रादिहेतिसंयुक्ताः पूज्या भूगेहमण्डले ।।३६।।
वायव्येशानपर्यन्तं दिव्यसिद्धौघमाप्नुयात् ।
गुरूंश्च पूजयेद् देवि पङ्क्तित्रितयमध्यगान् ।।३७।।

हे पार्वति ! अब इस यन्त्र के पूजन का प्रकार कहता हूँ, जिसके सुनने मात्र से करोड़ों गुना पूजा का फल प्राप्त होता है ।।३५।।

हे प्रिये ! ब्रह्मा अनन्त से युक्त इन्द्रादि दश दिक्पाल (इन्द्र, अग्नि, यम, निर्ऋति, वरुण, वायु, सोम, ईशान, ब्रह्मा और अनन्त उनके क्रम से वज्रादि आयुधों (वज्र, शक्ति, दण्ड, खड्ग, पाश, अङ्कुश, गदा, त्रिशूल, पद्म तथा चक्र) के साथ भूपुर में पूजन करना चाहिए ।।३६।।

वायव्य से ईशान पर्यन्त दिव्य सिद्ध समूहों वाले तीन गुरुओं का तीन पङ्क्तियों में पूजन करना चाहिए। तीन प्रकार के गुरु, दिव्य गुरु, सिद्ध गुरु ।।३७।।

ब्रह्माद्या मातरः पूज्या भैरवाष्टकसंयुतः ।
वामावर्तक्रमेणैव रक्तपुष्पैर्विशेषतः ।।३८।।
स्तम्भिनी मोहिना चैव क्षोभिणी द्राविपी तथा ।
जृम्भिणी भ्रामिणी रौद्री तथा संहारिणीति च ।।३९।।
वसुकोणे परा पूज्या महाचीनक्रमेच्छुभिः ।
वामावर्तेन देवेशि परमार्थप्रदा सदा ।।४०।।
काली च भद्रकाली च नित्याकाली त्रिकोणगाः ।
एताः सम्पूजनीयास्तु शिवाग्नीवामभागतः ।।४१।।

अष्टकोण में आठ भैरवों से युक्त ब्राह्मी आदि अष्ट मातृगणों का वामवृत्त के क्रम से विशेषकर रक्त पुष्पों से पूजन करना चाहिये ।।३८।।

स्तम्भिनी, मोहिनी, क्षोभिणी, द्राविणी, जृम्भिणी, भ्रामिणी, रौद्री तथा संहारिणी इन आठ महा शक्तियों की महाचीन पद्धति से पूजा करने वाले साधकों को वामावर्त्त से अष्टकोणों में पूजा करनी चाहिए ।।३९-४०।।

जो सदैव परमार्थ (मोक्ष) प्रदान करने वाली शक्तियाँ

देवीं रत्नमयीं पात्रे सौवर्णे पूजयेत् सुधीः ।
लयाङ्गमे तदाख्यातं सर्वसिद्धि पदं शिवे ।।४२।।
प्रयोगा नष्टवक्ष्येऽहं शृणुष्वावहिता प्रिये ।
स्तम्भनं मोहनं चैव मारणाकर्षणे ततः ।।४३।।
वशीकरोच्चाटनाख्ये शान्तिकं पौष्टिकं ततः ।
एतेषां साधनं वक्ष्ये मन्त्रसिद्धिप्रवर्त्तकम् ।।४४।।

हैं फिर त्रिकोण में शिव और अग्नि के वाम भाग में काली, भद्रकाली तथा नित्यकाली का पूजन करना चाहिए ।।४१।।

फिर, बुद्धिमान् साधक सुवर्ण निर्मित पात्र में देवी की रत्नमयी प्रतिमा की पूजा करे। हे शिवे ! लयागम में ऐसा कहा गया है, जो सर्वसिद्धिप्रद है ।।४२।।

हे प्रिये ! अब स्तम्भन, मोहन, मारण, आकर्षण, वशीकरण, उच्चाटन, शान्तिकर्म तथा पुष्टिकर्म इन आठों के साधन भूत आठ प्रयोगों को कहता हूँ। तुम सावधान होकर सुनो ।।४३-४४।।

येन श्रवणमात्रेण मन्त्रः कल्पद्रुमो भवेत् ।
रवौ स्नात्वा जपेन्मूलं वटमूलं महेश्वरि ।।४५।।
अयुतं तद्दशांशेन हुनेदाज्यं सितां शटीम् ।
गोधूममधुनाऽऽलोड्यं स्तम्भयेद्वादिनां रसान् ।।४६।।
जलसूर्येन्दुवातानां गतिरेषां च कामिनाम् ।
अश्वत्थस्य तले जप्त्वा मूलविद्यां यथाविधि ।।४७।।
अयुतं तद्दशांशेन जुहुयात् सर्पिरिणजम् ।
मांसं कणाशटीमिश्रं मोहनं जगतां भवेत् ।।४८।।

जिसके सुनने मात्र से यह मन्त्र कल्पवृक्ष के समान फलप्रद हो जाता है हे महेश्वरि ! साधक रविवार को स्नान कर वटवृक्ष के नीचे इस मन्त्र का दश हजार जप कर फिर उसका दशांश शर्करा, शटी, गोधूम और मधु को मिलाकर अग्नि में होम करे तो वादियों (शत्रुओं) की जिह्वा का स्तम्भन हो जाता है ।।४५-४६।।

ऐसा करने से जल, सूर्य, चन्द्रमा और वायु की भी गति स्तम्भित हो जाती है फिर इन कामियों की कथा ही

कुजे वा शनिवारे वा पित्र्यर्थे विष्टिसङ्गमे ।
गत्वा श्मशानं देवेशि नत्वा दिग्भूतभैरवान् ।।४९।।
चितां सम्पूज्य बीरेशे ‹.पेदयुतसङ्ख्यया ।
चिताग्नौ जुहुयादाज्यं गुरुपुष्ये शतावरीम् ।।५०।।
चण्डाल-केश-नखरदन्तमिश्रां च साधकः ।
तर्पयेत्तदशांशेन भोजयेत् पात्रपूर्वकम् ।।५१।।

क्या? अश्वत्थ (पीपल) के नीचे विधिपूर्वक इस महा विद्या के मूल मन्त्र की दश हजार जप कर फिर उसके दशांश का घी, हरिण का मांस और कणाशाटी मिलाकर हवन करे तो, सारा संसार मोहित हो जाता है ।।४७-४८।।

हे देवि ! मङ्गल अथवा शनिवार के दिन जब मघा नक्षत्र अथवा भद्रा काल हो उस समय श्मशान में जाकर दिशाओं में रहने वाले भूतों और भैरवों को नमस्कार कर चितास्थान में वीरेश की पूजा कर इस मन्त्र का दश हजार जप करे, फिर जिस दिन गुरुवार के दिन पुष्प नक्षत्र आवे तो चिताग्नि में शतावरी, चण्डाल के केश, नख और दाँत

शत्रुर्मृत्युसमानोऽपि मृत्युमायाति नाऽन्यथा ।
करेरिमूले गिरिजे जपेन्मूलं शिवेऽयुतम् ।।५२।।
हुनेदाज्यं वचां शुण्ठीं वानर्यातिवलासमम् ।
मेनका पीनवक्षोजा स्वस्थाभ्याकर्षिता भवेत् ।।५३।।
वानीरमूले देवेशि जपेदयुतसङ्ख्यया ।
हुनेदाज्यं ह्यरद्यूतं नागवल्लीदलाङ्कितम् ।।५४।।

से मिश्रित कर हवन करे। दशांश का तर्पण करे, सत्पात्रों को भोजन करावे तो यमराज के समान भी शत्रु मर जाता है, यह अन्यथा नहीं है। हे गिरिजे, हे शिवे ! करीर के मूल में इस मन्त्र का दश हजार जप करे फिर भी बचा, मर्कटी और अतिबला को समान भाग मिलाकर होम करे तो मोटे-मोटे स्तनों वाली पुष्ट गात्र वाली मेनका भी आकर्षित हो जाती हैं औरों का कहना ही क्या? ॥४९-५३॥

हे देवेशि ! वानीर (बेंतवृक्ष) के नीचे बैठकर इस मन्त्र का दश हजार जप करे फिर घी, ह्यरद्यूत, नागवल्ली (पान) का पत्ता तथा भूबिम्ब मिलाकर दशांश हवन करे,

भूबिम्बं तर्पयेद् देवीं दशांशेनैव साधकः।
शक्रोऽपि दासतां याति किं पुनः क्षुद्रमानुषः ॥५५॥
क्रूरर्क्षे क्रूरवेलायां जपेत् प्रेतालये मनुम्।
अयुतं तु चिदावह्नौ हुनेत् सर्पिः कणौषणान् ॥५६॥
जातीफलं पलं भैषं खररोमाणि पार्वति।
रिपूणां सहसा देवि भवेदुच्चाटनं परम् ॥५७॥
नदीकूले जपेन्मन्त्रमयुतं साधकोत्तमम्।
तद्दशांशं हुनेद्राज्यं समृद्धीकं स-पायसम् ॥५८॥

उसका दशांश देवी का तर्पण करे तो इन्द्र भी दास बन जाते हैं, क्षुद्र मनुष्यों की कथा ही क्या है ? ॥५४-५५॥

क्रूर (भरणी, कृत्तिका, आर्द्रा आदि) नक्षत्र में क्रूर वेला में, श्मशान पर इस मन्त्र का दश हजार जप करे। फिर श्मशानाग्नि में घी, कर्णी, ईष्णी, जातीफल, बकरे का मांस, गदहे के बाल को एक में मिलाकर होम करे तो हे देवि ! साधक के समस्त शत्रुओं का अत्यधिक उच्चाटन हो जाता है ॥५६-५७॥

कनकं तागरं रात्रौ तर्पयेत्तद्दशांशतः ।
अतिवृष्टेरनावृष्टे - र्मारीभीते - र्महेश्वरि ।।५९।।
राजभीतेर्महाव्याघ्रात् सद्यः शान्तिः प्रजायते ।
महापर्वदिने देवि यत्र तत्र जपेन्मनुम् ।।६०।।
अयुतं तद्दशांशेन जुहुयादाज्यपायसम् ।
शैलं सिन्दूरमिश्रं च सपलं स-लवङ्गकम् ।।६१।।

उत्तम साधक किसी नदी के किनारे इस मन्त्र का दश हजार जप करे। द्राक्षा, खीर, कनक, तगर को मिलाकर रात्रि में हवन करे, तदनन्तर उसका दशांश तर्पण करे तो हे महेश्वरि ! अतिवृष्टि, अनावृष्टि, महामारी का भय, राजा का भय महाव्याघ्र का भय, सद्यः शान्त हो जाता है। महापर्व के दिन जिस किसी स्थान पर बैठकर इस मन्त्र का दश हजार जप करे ।।५८-६०।।

फिर पायस, घृत, शिलाजीत, सिन्दूर, मांस, लवङ्ग, हरिण का मांस, शर, मीनसाल और कुलत्थ, आसव, शुक्र से भींगे रजस्वला के वस्त्र को एक में मिलाकर हवन

ऐणं मांसं शरं मीनं सालं च सकुलत्थकम् ।
सासवंशुकसद्धीत-रजोवत्यम्बरान्वितम् ।।६२।।
हुत्वा च तर्पयित्वा च भोजयित्वा च साधकान् ।
पितृणां देवतानां च ऋषीणां कुलिनां प्रिये ।।६३।।
दिव्यकल्पायुतं देवि महापुष्टिः प्रजायते ।
सर्वथा सर्वदा नित्यं महाविद्यां जपेत् सुधीः ।।६४।।
दशांशं होमयेत्तत्र तर्पयेत्तद्दशांशतः ।
भोजयेत्तद्दशांशेन मन्त्री किं किं न साधयेत्? ।।६५।।

एवं दशांश तर्पण करे। तदनन्तर प्रत्य-ङ्गिरा के उपासकों को भोजन करावे तो हे प्रिये ! पितरों, देवताओं, ऋषियों, अपने सपिण्ड, सगोत्र समस्त कुलों की देवताओं के दश हजार कल्प पर्यन्त महापुष्टि होती है। इसलिये बुद्धिमान् पुरुष को चाहिये कि सर्वदा निरन्तर मन लगाकर महाविद्या के मन्त्र का जप करे। तदनन्तर जप का दशांश होम करे, उसका दशांश तर्पण करे। तथा उसका भी दशांश ब्राह्मण भोजन करावे तो साधक अपना कौन-सा अभीष्ट है जिसे सिद्ध न कर लेवे ।।६१-६५।।

मूर्खो वागीशतां याति निर्धनो धनवान् भवेत् ।
महादारिद्र्ययुक्तोऽपि भवेद् वैश्रवणोपमः ।।६६।।
इह लोके भवेद् भोगी परत्र त्रिदिवं भजेत् ।
इतीदं मन्त्रसर्वस्वं प्रत्यङ्गिरा-रहस्यकम् ।।६७।।
पटलं गुह्यमीशानि गोपनीयं स्वयोनिवत् ।।६८।।

इति प्रत्यङ्गिरा-पटलं समाप्तम् ।।

इस मन्त्र के जप से मूर्ख वाचस्पति हो जाता है, दरिद्र धनवान् हो जाता है। किं बहुना महादारिद्र्य से युक्त भी पुरुष इस मन्त्र के जप के प्रभाव से कुबेर के समान धनी हो जाता है। ऐसा साधक इस लोक की समस्त वस्तुओं का भोग तो प्राप्त करता ही है मरने के बाद स्वर्ग भी प्राप्त कर लेता है। हे देवि ! इस प्रकार समस्त मन्त्रों का सर्वस्व प्रत्य-ङ्गिरा-रहस्य युक्त पटल हमने तुमसे कहा। हे ईशानि ! इसे अपनी योनि के समान अत्यन्त गुप्त रखना चाहिये ।।६६-६८।।

इस प्रकार हिन्दी टीका सहित प्रत्यङ्गिरा पटल समाप्त ।

विपरीत प्रत्यङ्गिरा-स्तोत्रम्

महेश्वर उवाच

श्रृणु देवि! महाविद्यां सर्वसिद्धिप्रदायिकाम्।
यस्य विज्ञानमात्रेण शत्रुवर्गा लयं गताः ।।१।।
विपरीतमहाकाली सर्वभूतभयङ्करी।
यस्याः प्रसङ्गमात्रेण कम्पते च जगत्त्रयम्।।२।।
न च शान्तिप्रदः कोऽपि परमेशो न चैव हि।
देवताः प्रलयं यान्ति किं पुनर्मानवादयः ।।३।।
पठनाद् धारणाद् देवि! सृष्टिसंहारको भवेत्।
अभिचारादिकाः सर्वायाया साध्यतमाः क्रियाः।
स्मरणेन महाकाल्या नाशं जग्मुः सुरेश्वरि।।४।।
सिद्धिविद्या महाकाली यत्रेवेह च मोदते।
सप्तलक्षमहाविद्या गोपिता परमेश्वरि।।५।।

महाकाली महादेवि ! शङ्करश्रेष्ठदेवताः ।
यस्याः प्रसादमात्रेण परब्रह्म महेश्वरः ।।६।।
कृतिमादि-विषघ्नीशा प्रलयादि निवर्त्तिका ।।७।।
त्वदङ्घ्रिदर्शनादेव कम्पमानो महेश्वरः ।
यस्य निग्रहमात्रेण पृथिवी प्रलयं गता ।।८।।
दशविद्या यदा ज्ञाता दशद्वारसमाश्रिता ।
प्राचीद्वारे भुवनेशी दक्षिणे कालिका तथा ।।९।।
नाक्षत्री पश्चिमे च उत्तरे भैरवी तथा ।
ऐशान्यां सततं देवि ! प्रचण्ड-चण्डिका तथा ।।१०।।
आग्नेय्यां बगलादेवी रक्षःकोणे मतङ्गिनी ।
धूमावती च वायव्ये अध ऊर्ध्वे च सुन्दरी ।।११।।
सम्मुखे षोडशी देवी जाग्रत्-स्वप्न-स्वरूपिणी ।
वामभागे च देवेशी महात्रिपुरसुन्दरी ।।१२।।
अंशरूपेण देवेशी सर्वा देव्यः प्रतिष्ठिताः ।
महाप्रत्यङ्गिरा चैव प्रत्यङ्गिरा तथोदिता ।।१३।।

महाविष्णुर्यदा ज्ञाता भुवनानां महेश्वरि ।
कर्ता पाता च संहर्ता सत्यं सत्यं वदामि ते ।।१४।।
भुक्ति-मुक्तिप्रदा देवि महाकाली सुनिश्चितम् ।
वेदशास्त्र-प्रगुप्ता सा नन्दस्या दैवतेरपि ।।१५।।
अनन्तकोटि-सूर्यामा सर्वजन्तुभयङ्करी ।
ध्यान-ज्ञान-विहीना सा वेदान्तामृतवर्षिणी ।।१६।।
सर्वमन्त्रमयी काली निगमा-ऽऽगम-कारिणी ।
निगमाऽऽगमकारी सा महाप्रलयकारिणी ।।१७।।
यस्याऽङ्गधर्मलवा च सा गङ्गा परमोदिता ।
महाकाली नगेऽनुस्था विपरीता महोदया ।।१८।।
विपरीता प्रत्यङ्गिरा तत्र काली प्रतिष्ठिता ।
साधकस्मरणमात्रेण शत्रूणां निगमागमाः ।।१९।।
नाशं जग्मुः नशीं जग्मुः सत्यं सत्यं वदामि ते ।
परब्रह्म महादेवी पूजनैरीश्वरो भवेत् ।।२०।।
शिवकोटिसमो योगी विष्णुकोटिसमः स्थिरः ।
सर्वैराराधिता सा वै भुक्ति-मुक्तिप्रदायिनी ।।२१।।

गुरुमन्त्रशतं जप्त्वा श्वेतसर्षपमानयेत् ।।२२।।
आत्मरक्षां शत्रुनाशं सा करोति च तत्क्षणात् ।
ऋषिन्यासादिकं कृत्वा सर्षपैर्मारणं चरेत् ।।२३।।

मन्त्रः— ॐ हुँ स्फारय स्फारय मारय मारय शत्रु वर्गान् नाशय नाशय स्वाहा । इति विंशाक्षरी ।

विनियोगः— ॐ अस्य श्रीमहाविपरीतप्रत्यङ्गिरा-स्तोत्रमन्त्रस्य महाकालभैरवऋषिस्त्रिष्टुपूछन्दः, श्रीमहा-विपरीत-प्रत्यङ्गिरादेवता, हं बीजं, ह्रीं शक्तिः, क्लीं कीलकं, मम सर्वार्थसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः ।

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ नमो विपरीतप्रत्यङ्गि-रायै सहस्रानेककार्यलोचनायै कोटिविद्युज्जिह्वायै महा-व्यापिन्यै संहाररूपायै जन्मशान्तिकारिण्यै मम सपरि-वारकस्य भावि-भूत-भवच्छत्रु दारापत्यान् संहारय-संहारय महाप्रभावं दर्शय-दर्शय हिलि-हिलि किलि-किलि मिलि-मिलि चिलि-चिलि भूरि-भूरि विद्युज्जिह्वे

ज्वल-ज्वल प्रज्वल-प्रज्वल ध्वंसय-ध्वंसय प्रध्वंसय-प्रध्वंसय ग्रासय-ग्रासय पिब-पिब नाशय-नाशय त्रासय-त्रासय वित्रासय-वित्रासय मारय-मारय विमारय-विमारय भ्रामय-भ्रामय विभ्रामय-विभ्रामय द्रावय-द्रावय विद्राावय-विद्रावय हूँ हूँ फट् स्वाहा।

हूँ हूँ हूँ हूँ हूँ ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ विपरीतप्रत्यङ्गिरे हूँ लँ ह्रीं लँ क्लीं लँ ॐ लँ फट्-फट् स्वाहा।

हूँ लँ ह्रीं क्लीं ॐ विपरीतप्रत्यङ्गिरे मम सपरिवारकस्य यावच्छत्रून् देवता-पितृ-पिशाच-नाग-गरुड-किन्नर-विद्याधर-गन्धर्व-यक्ष-राक्षस-लोकपालान् ग्रह-भूत-नर-लोकान् समन्त्रान् सौषधान् सायुधान् सह-सहायान् पाणौ छिन्धि-छिन्धि भिन्धि-भिन्धि निकृन्तय-निकृन्तय छेदय-छेदय उच्चाटय-उच्चाटय मारय-मारय तेषां साहङ्कारादिधर्मान् कीलय-कीलय घातय-घातय

नाशय-नाशय विपरीतप्रत्यङ्गिरे स्फ्रें स्फ्रेत्कारिणी ॐ ॐ जँ ॐ ॐ जँ ॐ ॐ जँ ॐ ॐ जँ ॐ ॐ जँ ॐ ठः ॐ ठः ॐ ठः ॐ ठः ॐ ठः मम सपरिवारकस्य शत्रूणां सर्वा विद्याः स्तम्भय-स्तम्भय नाशय-नाशय हस्तौ स्तम्भय-स्तम्भय मुखं स्तम्भय-स्तम्भय नाशय-नाशय नेत्राणि स्तम्भय-स्तम्भय नाशय-नाशय दन्तान् स्तम्भय-स्तम्भय नाशय-नाशय जिह्वां स्तम्भय-स्तम्भय नाशय-नाशय पादौ स्तम्भ-स्तम्भय नाशय-नाशय गुह्यं स्तम्भय-स्तम्भय नाशय-नाशय सकुटुम्बानां स्तम्भय-स्तम्भय नाशय-नाशय स्थानं स्तम्भय-स्तम्भय नाशय-नाशय सँ प्राणान् कीलय-कीलय नाशय-नाशय हूँ हूँ हूँ हूँ हूँ हूँ हूँ ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं ऐं ऐं ऐं ऐं ऐं ऐं ऐं ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ फट्-फट् स्वाहा ।

मम सपरिवारकस्य सर्वतो रक्षां कुरु-कुरु फट्-फट् स्वाहा ह्लीं ह्लीं ह्लीं ह्लीं ह्लीं ऐं ह्रूं ह्लीं क्लीं हूं सों विपरीतप्रत्यङ्गिरे ! मम सपरिवारकस्य भूत-भविष्य-च्छत्रूणामुच्चाटनं कुरु कुरु हूँ हूँ फट् स्वाहा ।

ह्लीं ह्लीं ह्लीं ह्लीं ह्लीं वँ वँ वँ वँ वँ लँ लँ लँ लँ लँ रँ रँ रँ रँ रँ यँ यँ यँ यँ यँ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ नमो भगवति विपरीतप्रत्यङ्गिरे दुष्ट-चाण्डालिनी-त्रिशूल-वज्राङ्कुश-शक्ति-शूल-धनुः-शरपाशधारिणी शत्रु-रुधिर-चर्म-मेदो-मांसा-ऽस्थि-मज्जा-शुक्र-मेहन-वसा-वाक्-प्राण-मस्तक-हेत्वादिभक्षिणी परब्रह्मशिवे ज्वाला-दायिनी-मालिनी शत्रूच्चाटन-मारण-क्षोभन-स्तम्भन-मोहन-द्रावण-जृम्भण-भ्रामण-रौद्रण-सन्तापन-यन्त्र-मन्त्र-तन्त्रान्तर्याग-पुरश्चरण-भूतशुद्धि-पूजा-फलपरम-निर्वाण-हारणकारिणि कपालखट्वाङ्ग-परशुधारिणी मम सपरिवारकस्य भूतभविष्यच्छत्रून् स-सहायान् सवाहनान् हन-हन रण-रण दह-दह

दम-दम धम-धम पच-पच मथ-मथ लङ्घय-लङ्घय खादय-खादय चर्बय-चर्बय व्यथय-व्यथय ज्वरय-ज्वरय नूकान् कुरु-कुरु ज्ञानं हर-हर हूँ-हूँ फट्-फट् स्वाहा ।

ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं हूँ हूँ हूँ हूँ हूँ हूँ हूँ क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ विपरीतप्रत्यङ्गिरे ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं हूँ हूँ हूँ हूँ हूँ हूँ हूँ क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ फट्-फट् स्वाहा ।

मम सपरिवारकस्य कृतमन्त्र-यन्त्र-तन्त्र-हवन-कृतौषध-विषचूर्ण-शस्त्राद्यभिचार-सर्वोपद्रवादिकं येन कृतं कारितं कुरुते करिष्यति वा तान् सर्वान् हन-हन स्फारय-स्फारय सर्वतो रक्षां कुरु-कुरु हूँ हूँ फट्-फट् स्वाहा ।

हूँ हूँ हूँ हूँ हूँ हूँ हूँ ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ फट्-फट् स्वाहा ।

ॐ हूँ ह्रीं क्लीं ॐ अं विपरीतप्रत्यङ्गिरे मम सपरिवारकस्य शत्रवः कुर्वन्ति करिष्यन्ति शत्रुश्च कारयामास कारयन्ति कारयिष्यन्ति याऽन्यां कृत्यान्तैः सार्धं तांस्तां विपरीतां कुरु-कुरु नाशय-नाशय मारय मारय श्मशानस्थानं कुरु-कुरु कृत्यादिकां क्रियां भावि-भूत-भवच्छत्रूणां यावत् कृत्यादिकां क्रियां विपरीतां कुरु-कुरु तान् डाकिनीमुखे हारय-हारय भीषय-भीषय त्रासय-त्रासय परमशमनरूपेण हन-हन धर्मावच्छिन्नं निर्वाणं हर-हर तेषाम् इष्टदेवानां शासय-शासय क्षोभय क्षोभय प्राणादिमनोबुद्ध्य-हङ्कार-क्षुत्तृषाकर्षण-लयन-आवागमन-मरणादिकं नाशय-नाशय हूँ हूँ ह्रींह्रीं क्लीं क्लीं ॐ ॐ फट् फट् स्वाहा।

क्षँ हँ सँ षँ शँ वँ लँ रँ यँ मँ भँ बँ फँ पँ नँ धँ दँ थँ तँ णँ ढँ डँ ठँ टँ ञँ झँ जँ छँ चँ ङँ घँ गँ खँ कँ अः अँ औं ओं ऐं एँ लॄँ लृँ ॠँ ऋँ ऊँ उँ ईं इँ आँ अँ हूँ हूँ हूँ हूँ हूँ हूँ

हूँ ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ विपरीत-प्रत्यङ्गिरे हूँ हूँ हूँ हूँ हूँ हूँ हूँ ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ फट् फट् स्वाहा ।

क्षं लं हं सं वं लं रं यं मं भं बं फं पं नं धं दं थं तं णं ढं डं ठं टं ञं झं जं छं चं ङं घं गं खं कं अः अं औं ओं ऐं एं लॄं लृं ॠं ऋं ऊं उं ईं इं आँ अं हूँ हूँ हूँ हूँ हूँ हूँ हूँ ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ फट् फट् स्वाहा ।

अः अं औं ओं ऐं एं लॄं लृं ॠं ऋं ऊं उं ईं इं आँ अं ङं घं गं खं कं ञं झं जं छं चं णं ढं डं ठं टं नं धं दं थं तं मं भं बं फं पं क्षं लं हं सं षं शं वं लं रं यं ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ मम सपविारकस्य स्थाने शत्रूणां कृत्यान्

सर्वान् विपरीतान् कुरु-कुरु तेषां तन्त्रमन्त्रतन्त्रार्चन-श्मशानारोहण-भूमिस्थापन-भस्मप्रक्षेपण-पुरश्चरण-होमाभिषेकादिकान् कृत्यान् दूरी कुरु-कुरु हूँ विपरीतप्रत्यङ्गिरे मां सपरिवारकं सर्वतः सर्वेभ्यां रक्ष रक्ष हूँ ह्रीं फट् स्वाहा ।

अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं लृं ॡं एं ऐं ओं औं अं अः कं खं गं घं ङं चं छं जं झं ञं टं ठं डं ढं णं तं थं दं धं नं पं फं बं भं मं यं रं लं वं शं षं सं हं ळं क्षं ॐ क्लीं ह्रीं श्रीं ॐ क्लीं ह्रीं श्रीं ॐ क्लीं ह्रीं श्रीं ॐ क्लीं ह्रीं श्रीं ॐ क्लीं ह्रीं श्रीं ॐ क्लीं ह्रीं श्रीं ॐ क्लीं ह्रीं श्रीं ॐ हूँ ह्रीं क्लीं ॐ विपरीतप्रत्यङ्गिरे हूँ ह्रीं क्लीं ॐ फट् स्वाहा ।

ॐ क्लीं ह्रीं श्रीं ॐ क्लीं ह्रीं श्रीं ॐ क्लीं ह्रीं श्रीं ॐ क्लीं ह्रीं श्रीं ॐ क्लीं ह्रीं श्रीं अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं ॡं लृं एं ऐं ओं औं अं अः कं खं गं घं ङं चं छं जं झं ञं टं ठं डं ढं णं तं थं दं धं नं पं फं बं भं मं यं रं लं वं

शं षं सं हं क्षं विपरीतप्रत्यङ्गिरे मम सपरिवारकस्य शत्रूणां विपरीतक्रियां नाशय-नाशय त्रुटिं कुरु-कुरु तेषामिष्टदेवतादि विनाशं कुरु-कुरु सिद्धिम् अपनय-अपनय विपरीतप्रत्यङ्गिरे शत्रुमर्दिनि भयङ्करि नाना-कृत्यामर्दिनि ज्वालिनि महाघोरतरे त्रिभुवनभयङ्करि शत्रूणां मम सपरिवारकस्य चक्षुःश्रोत्राणि पादौ सर्वतः सर्वेभ्यः सर्वदा रक्षां कुरु-कुरु स्वाहा ।

श्रीं ह्रीं ऐं ॐ वसुन्धरे मम सपरिवारकस्य स्थानं रक्ष-रक्ष हूं फट् स्वाहा । श्रीं ह्रीं ऐं ॐ महालक्ष्मि मम सपरिवारकस्य पादौ रक्ष रक्ष फट् स्वाहा । श्रीं ह्रीं ऐं ॐ चण्डिके मम सपरिवारकस्य जङ्घे रक्ष रक्ष हूं फट् स्वाहा । श्रीं ह्रीं ऐं ॐ चामुण्डे मम सपरिवारकस्य गुह्यं रक्ष रक्ष हूँ फट् स्वाहा । श्रीं ह्रीं ऐं ॐ इन्द्राणि मम सपरिवारकस्य नाभिं रक्ष रक्ष हूं फट् स्वाहा । श्रीं ह्रीं ऐं ॐ नारसिंहि मम सपरिवारकस्य बाहुं रक्ष रक्ष हूं

फट् स्वाहा । श्रीं ह्रीं ऐं ॐ वाराहि मम सपरिवारकस्य हृदयं रक्ष रक्ष हूँ फट् स्वाहा । श्रीं ह्रीं ऐं ॐ वैष्णवि मम सपरिवारकस्य कण्ठं रक्ष रक्ष हूँ फट् स्वाहा । श्रीं ह्रीं ऐं ॐ कौमारि मम सपरिवारकस्य वक्त्रं रक्ष रक्ष हूँ फट् स्वाहा । श्रीं ह्रीं ऐं ॐ माहेश्वरि मम सपरिवार-कस्य नेत्रे रक्ष रक्ष हूँ फट् स्वाहा । श्रीं ह्रीं ऐं ॐ ब्रह्मणि मम सपरिवारकस्य शिरो रक्ष रक्ष हूँ फट् स्वाहा । हूँ ह्रीं क्लीं ॐ विपरीतप्रत्यङ्गिरे मम सपरि-वारकस्य छिद्रं सर्वगात्राणि रक्ष रक्ष हूँ फट् स्वाहा ।

सन्तापिनी संहारिणी रौद्री च भ्रामिणी तथा ।
जृम्भिणी द्राविणी चैव क्षोभिणी मोहिनी ततः ।।२४।।
स्तम्भिनी चांऽशरूपास्ताः शत्रुपक्षे नियोजिताः ।
प्रेरिताः साधकेन्द्रेण दुष्टशत्रुप्रमर्दिकाः ।।२५।।

ॐ सन्तापिनि स्फ्रें स्फ्रें मम सपरिवारकस्य शत्रन् रौद्रय-रौद्रय हूँ फट् स्वाहा । ॐ संहारिणि स्फ्रें-स्फ्रें

मम सपरिवारकस्य शत्रून् संहारय-संहारय हूँ फट् स्वाहा। ॐ रौद्रि स्फ्रें-स्फ्रें मम सपरिवारकस्य शत्रून् रौद्रय-रौद्रय हूँ फट् स्वाहा। ॐ भ्रामिणि स्फ्रें-स्फ्रें मम सपरिवारकस्य शत्रून् भ्रामय भ्रामय हूँ फट् स्वाहा। ॐ जृम्भिणि स्फ्रें-स्फ्रें मम सपरिवारकस्य शत्रून् जृम्भय-जृम्भय हूँ फट् स्वाहा। ॐ द्राविणि स्फ्रें-स्फ्रें मम सपरिवारकस्य शत्रून् द्रावय-द्रावय हूँ फट् स्वाहा। ॐ क्षोभिणि स्फ्रें स्फ्रें मम सपरिवारकस्य शत्रून् क्षोभय-क्षोभय हूँ फट् स्वाहा। ॐ मोहिनि स्फें-स्फ्रें मम सपरिवारकस्य शत्रून् मोहय-मोहय हूँ फट् स्वाहा। ॐ स्तम्भिनि स्फ्रें-स्फ्रें मम सपरिवार-कस्य शत्रून् स्तम्भय-स्तम्भय हूँ फट् स्वाहा।

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ अँ आँ इँ ईं उँ ऊँ ऋँ ॠँ लृँ ॡँ एँ ऐं ओं औं अँ अः कँ खँ गँ घँ ङँ चँ छँ जँ झँ ञँ टँ ठँ डँ ढँ णँ तँ थँ दँ धँ नँ पँ फँ बँ भँ मँ यँ रँ लँ वँ

शँ षँ सँ हँ लँ क्षँ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ विपरीत-परब्रह्ममहाप्रत्यङ्गिरे ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ अँ आँ इँ ईं उँ ऊँ ऋँ ॠँ लृँ ॡँ एँ ऐं ओं औं अँ अः कँ खँ गँ घँ ङँ चँ छँ जँ झँ ञँ टँ ठँ डँ ढँ णँ तँ थँ दँ धँ नँ पँ फँ बँ भँ मँ यँ रँ लँ वँ शँ षँ सँ हँ लँ क्षँ मम सपरिवारकस्य सर्वेभ्यः सर्वतः सर्वदा रक्षां कुरु कुरु मरण-भयापन-पापनय-त्रिजगतां पररूपवित्तायुर्मे सपरिवारकाय देहि देहि दापय साधकत्वं प्रभुत्वं च सततं देहि-देहि विश्वरूपे धनं पुत्रान् देहि-देहि मां सपरिवारकस्य मां पश्येत्तु देहिनः सर्वे हिंसकाः प्रलयं यान्तु मम सपरिवारकस्य शत्रूणां बलबुद्धिहानिं कुरु-कुरु तान् स-सहायान् स्वेष्टदेवतान् संहारय-संहारय स्वाचारम-पनयोऽपनय ब्रह्मास्त्रादीनि व्यर्थीकुरु हूँ हूँ स्फ्रें-स्फ्रें ठः ठः फट् फट् ॐ ।

फलश्रुतिः

वृणोति य इमां विद्यां शृणोति च सदाऽपिताम् ।
यावत्कृत्यादि शत्रूणां तत्क्षणादेव नश्यति ।।१।।
मारणं शत्रुवर्गाणां रक्षणाय चात्मपरम् ।
आयुर्वृद्धि-र्यशोवृद्धिस्तेजोवृद्धिस्तथैव च ।।२।।
कुबेर इव वित्ताढ्यः सर्वसौख्यमवाप्नुयात् ।
वाय्वादीनामुपशमं विषमज्वरनाशनम् ।।३।।
परवित्तहरा सा वै परप्राणहरा तथा ।
परक्षोभादिककरा तथा सम्पत्करा शुभा ।।४।।
स्मृतिमात्रेण देवेशि ! शत्रुवर्गा लयं गताः ।
इदं सत्यमिदं सत्यं दुर्लभा दैवतैरपि ।।५।।
शठाय परशिष्याय न प्रकाश्या कदाचन ।
पुत्राय भक्तियुक्ताय स्वशिष्याय तपस्विने ।
प्रदातव्या महाविद्या चात्मवर्गप्रदा यतः ।।६।।
विना ध्यानैर्विना जापैर्विना पूजा विधानतः ।
विना षोढा विना ज्ञानैर्मोक्षसिद्धिः प्रजायते ।।७।।

परनारीहरा विद्या पररूपहरा तथा ।
वायुचन्द्रस्तम्भकरा मैथुनानन्दसंयुता ।।८।।
त्रिसन्ध्यमेकसन्ध्यं वा यः पठेत् भक्तितः सदा ।
सत्यं वदामि देवेशि ! मम कोटिसमो भवेत् ।।९।।
क्रोधादेव गणाः सर्वे लयं यास्यन्ति निश्चितम् ।
किं पुनर्मानवा देवि ! भूतप्रेतादयो मृताः ।।१०।।
विपरीता समा विद्या न भूता न भविष्यति ।
पठनान्ते परब्रह्म विद्या सभास्करा तथा ।
मातृकां पुटितं देवि ! दशधा प्रजपेत् सुधीः ।।११।।
वेदादिपुटिका देवि ! मातृकानन्तरूपिणि ! ।
तथा हि पुटितां विद्यां प्रजपेत् साधकोत्तमः ।।१२।।
मनोजित्वा जपेल्लोकं भोगं रोगं तथा यजेत् ।
दीनतां हीनतां जित्वा कामिनीं निर्वाणपद्धतिम् ।।१३।।

इति विपरीत-प्रत्यङ्गिरा-स्तोत्रं समाप्तम् ।

ओमप्रकाशमिश्रशास्त्री द्वारा सम्पादित ग्रन्थ-रत्नानि

- पुत्रप्रदायकं अभिलाषाष्टकस्तोत्रम् ।
- अमोघशिवकवचम् ।
- आदित्यहृदयस्तोत्रम् । (वाल्मीकीयरामायणान्तर्गत)
- दत्तात्रेयवज्रकवचम् ।
- हनुमद्-अघोरास्त्रम् ।
- हनुमत्कवचम् । (एकमुखी-पञ्चमुखी-सप्तमुखी-एकादशमुखी)
- कालीकवचम् ।
- सप्रयोगमहाविद्यास्तोत्रम् ।
- ललितासहस्रनामस्तोत्रम् ।
- विलोमदुर्गासप्तशती । (प्रथम बार सात सौ श्लोकों के साथ)
- दुर्गासप्तशती । (प्रथम बार सात सौ श्लोकों कें साथ)
- सप्रयोगविपरीतप्रत्यङ्गिरास्तोत्रम् ।
- सप्रयोग आपदुद्धारकबटुकभैरवस्तोत्रम् ।

सम्पूर्कसूत्र :

शिव संस्कृत संस्थान

सा. ५/३५ ए-५, कमलानगर (रमरेपुर), पाण्डेयपुर, वाराणसी ।

मो. : ९४५०५४०१३५